मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक पत्र

वर्ष:3 ।अंक:01 ।पृष्ठ:59 ।मूल्य:निःशुल्क ।इंदौर–उज्जैन ।सोमवार1 अगस्त 2022 ।श्रावण/भाद्रपद मास(6),विक्रम संवत् 2079 ।इ.संस्करण

विश्व में जो कुछ होता है वह सब हरि लीला का विस्तार है। श्री कृष्ण के सभी कृत्य लीला–पक्ष की ओर भक्तों का रंजन करते हैं एवं विशेष संदेश भी देते हैं...... 22

'कहता हों आंखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी' – कबीरदास जी ने पुस्तकी ज्ञान के स्थान पर आँखों से देखे हुए सत्य और अनुभव को प्रमुखता दी है...... 58

स्फटिक शिवलिंग का विविध द्रव्यों से विधिवत् अभिषेक करने पर दरिद्रता, शोक व असाध्य रोग समाप्त हो जाते हैं एवं लक्ष्मी अपने पूर्ण स्वरूप में विराजित होती हैं...... 25

22

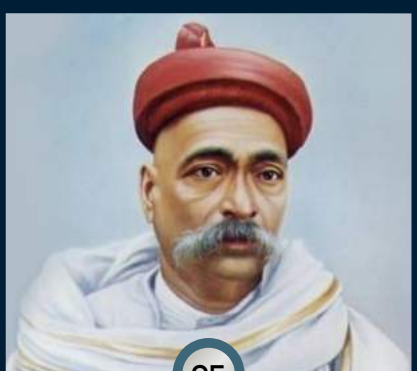

05

राष्ट्रवादी, शिक्षक, समाज सुधारक, वकील,'पूर्ण स्वराज' के पैरोकार और भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रथम लोकप्रिय नेता बाल गंगाधर तिलक......

14

यज्ञ मात्र अग्निहोत्र ही नहीं, वरन् परमार्थ परायण कार्य भी यज्ञ है। यज्ञ स्वयं के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व के कल्याण के लिए किया जाता है......

16

राष्ट्रध्वज में अशोक चक्र की समस्त तिल्लियाँ हमें अपने रंग–रूप जाति और धर्म के अंतर को भुलाकर समृद्धि के शिखर तक ले जाने का प्रतीक है......

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)

सह सम्पादक
डॉ. दिग्विजय शर्मा (आगरा)

उपसम्पादक
सुश्री इंदु सिंह ''इन्दुश्री'' (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

प्रतिष्ठित लेखकों/लेखिकाओं को सादर नमन्!

अध्यात्म संदेश का आगामी **अंक 1 सितंबर** 2022 को प्रकाशित हो रहा है। आप सभी से शिक्षक, साक्षरता, बेटियाँ हमारा गौरव, पर्यटन, किशोर उपयोगी, प्रकृति प्रेम, तकनीकी शिक्षा, पारिवारिक संस्कार, समाज सेवा, छोटी बातें बड़े काम की, प्रेरक प्रसंग, धर्म, संस्कृति, अध्यात्म पर आपके संस्मरण, कविताऐं, आलेख, लघुकथाऐं आमंत्रित हैं।

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 20 अगस्त 2022

विशेष:

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह पूर्णत: नि: शुल्क है। रचनाएँ ई–मेल: **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

लेखक किसी भी पत्रिका के प्राण होते हैं। उनकी रचनाएं ही उसे प्राणवान बनाती हैं। अपने सारगर्भित विदुतापूर्ण आलेखों द्वारा पत्रिका को सुंदर स्वरूप प्रदान करने वाले सभी साहित्य-साधकों को मेरा सादर अभिवादन। हम सबका यह परम सौभाग्य है कि हम उस देश के वासी हैं, जहां विविध ऋतुएं अपना सौंदर्य बिखेरती हैं। यहां हर ऋतु के हर मास में पर्व- त्योहारों का मेला लगता है। श्रावण मास में तीज, रक्षाबंधन, तुलसी-जयंती, पंद्रह अगस्त, जन्माष्टमी आदि त्योहार आ रहे हैं। जन्माष्टमी का पर्व श्रीकृष्ण की दिव्य व चमत्कारिक लीलाओं की याद दिलाता है। कृष्ण की दिव्य लीलाओं को बच्चे और बूढ़े सभी मुग्ध भाव से सुनते और देखते है, किंतु आज आवश्यकता इस बात है कि बाल गोपाल की विविध दैहिक लीलाओं की दहलीज लांघकर योगी श्रीकृष्ण की आत्मा तक पहुंचे। हमें चाहिए उस योगीश्वर द्वारा दिए गए सर्वकालिक सत्य को योग के सिद्धान्त को समझें और अपने व्यावहारिक जीवन में एक योगी बनें।

यह सत्य है कि कृष्ण की हर लीला दिव्य है और प्रतीक रूप में संदेश देती है जैसे-जन्म के छठे दिन ही पूतना-वध की कथा। पूतना अर्थात जो पूत (पवित्र) नहीं है, उसका वध। कृष्ण ने इसके माध्यम से संदेश दिया कि जो तुम्हारे जीवन में पवित्र नहीं हैं उसे समाप्त कर दो। इसी प्रकार माखन-लीला से आशय है जो मक्खन अर्थात सारतत्व है, उसे ग्रहण कर लो। रास-लीला आदि में गोपी-कृष्ण-मिलन प्रतीक है-जीवात्मा और ब्रह्म मिलन का। आशय यह है कि कृष्ण की हर लीला साभिप्राय है। उन लीलाओं के साथ-साथ लीलाधारी के उस महत्त्वपूर्ण संदेश को भी पकड़ें जिसे योगीश्वर श्री कृष्ण ने 'भगवद्गीता' में दिया है। यह संदेश मानव-समाज तथा मानव-जीवन के प्रति नैतिक, सामाजिक, भावात्मक तथा आध्यात्मिक अनुशासन के व्यवहारिक समन्वय को प्रस्तुत करता है।

इसी महीने स्वतंत्रता दिवस भी है। देश भर में स्वतंत्रता का अमृत महोत्सव धूमधाम से मनाया जा रहा है। भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम और राष्ट्रवाद एक-दूसरे से संबद्ध हैं। साहित्य और राष्ट्रीयता भी परस्पर घनिष्ठ रूप से जुड़े हैं। कलम

के माध्यम से ही राष्ट्रीय चेतना का संचार होता है और वह बलवती होने पर अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। देखिए दिनकर की कविता 'कलम और तलवार' में - कलम देश की बड़ी शक्ति है भाव जगाने वाली,/दिल ही नहीं दिमागों में भी आग लगाने वाली। पैदा करती कलम विचारों के जलते अंगारे,/और प्रज़्वलित प्राण देश क्या कभी मरेगा मारे।

राष्ट्रीयता का स्वर परिस्थिति विशेष में ही नहीं उभरा, वह किसी न किसी रूप या तत्त्व के रूप में सदा अभिव्यक्त होता रहा है। वैदिक साहित्य में राष्ट्रीय विषयों से सम्बद्ध मंत्रों के अन्तर्गत भौगोलिक अखंडता, मातृभूमि की महिमा और राष्ट्र के गौरव का वर्णन हुआ है। उस युग में विदेशी-दासता जैसी कोई स्थिति अथवा शासकों का दमन नहीं था। पर बच्चों को बचपन में अपने देश के प्राचीन गौरव से रागात्मक संबंध जुड़ जाने के संस्कार मिल जाते थे। देश-प्रेम की शिक्षा उसके लिए त्याग करने और बलिदान हो जाने की प्रेरणा वाले गीत साहित्यकारों ने रचकर सदा ही प्रेरित किया है। अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने के लिए अनेक प्रकार के स्वतंत्रता-आंन्दोलन चल रहे थे। दो हज़ार वर्षों से निरंतर यह लड़ाई चल रही है। पराधीनता के संक्रमण काल में आज़ादी की लड़ाई कभी हारे, कभी जीते। वीर पुरुष मातृभूमि की वेदी पर हँसते-हँसते अपने जीवन-सुमन अर्पित कर रहे थे। सन् 1857 ई. की क्रांति को भारत का प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम कहा जा सकता है। यह क्रांति भले ही राजनीतिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं रही और असफल रही किंतु देश में नवचेतना जरूर जाग्रत हुई, जो क्रमशः बलवती होती गई। इसे बल दिया विदेशी शासकों के आर्थिक शोषण, औद्योगीकरण, पश्चिमी शिक्षा पद्धति, जनता के दमन की नीति ने। नई विचारधाराओं के प्रभाव से तद्युगीन साहित्य भी अछूता नहीं रहा। सांस्कृतिक और राजनीतिक उथल-पुथल और जागृति से साहित्य की भावभूमि प्रभावित हुई। साहित्यकारों के स्वर में राष्ट्रीयता की गूंज सुनाई दी। दासता की बेड़ियों से मातृभूमि को मुक्त कराने में इन्होंने अपने कलम के माध्यम से जोश और उत्साह भरे गीत लिखे। दक्षिण में सुब्रह्मण्य भारती, पूर्व में बंकिमचंद्र, पश्चिम में इकबाल और उत्तर में बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' माखनलाल चतुर्वेदी, सोहनलाल द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, रामधारीसिंह दिनकर आदि अपनी कविताओं में राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय गौरव की अभिवृद्धि कर भारतीय जनजागरण और स्वतंत्रता-संग्राम में जन-मानस को उद्बोधित और प्रेरित कर रहे थे। इसी समय राष्ट्रीय जागृति के अनेक नायक-महानायक उभरे जिन्होंने सामाजिक सुधार तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान के कार्यों द्वारा राष्ट्रीय जागरण को तीव्रता प्रदान की। राष्ट्रीय जागरण के ये अग्रदूत थे- राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद। तत्कालीन कुरीतियों का नाश कर समाज में नई चेतना का संचार किया। भारतीय स्वतंत्रता- संग्राम में असंख्य वीरों ने अंग्रेजी-दासता से मुक्त कराने के लिए जहाँ तलवार को माध्यम बनाया वहाँ हमारे साहित्यकारों ने कलम को। साहित्यकारों ने बच्चों, किशोरों और युवाओं को दासता की बेड़ियों से मुक्त कराने हेतु उन्हें अपनी कलम से प्रेरित किया। उनमें जोश भरा। उत्साह भरा। हर भारतीय के मन में राष्ट्राभिमान का भाव जगाया। दोनों का योगदान अविस्मरणीय है।

इसी महीनेतुलसी-जयंती भी है। तुलसीदास हिंदी साहित्य के यशस्वी कवि-चिंतक हैं। वह केवल 'मध्ययुग' के ही नहीं वरन् समग्र हिंदी साहित्य-जगत् की चिरस्मरणीय एक विलक्षण प्रतिभा हैं। वह केवल कवि ही नहीं, भक्त कवि के रूप में जन-जन की वाणी में, वरन् हृदय में भी विराजमान हैं। तुलसी ने सुव्यवस्थित समाज पर बहुत बल दिया है। रामचरितमानस में कथानायक राम का चरित न केवल भक्तों का रंजन करता है वरन् वह जीने की कला भी सिखाता है। उनकी लीलाएँ संदेश देती हैं। वे जनमानस की प्रेरक हैं। जीवन के किस मोड़ पर किस प्रकार का निर्णय लेना है, रामचरितमानस इसका मार्ग-दर्शन करता है। रामचरितमानस मात्र हिन्दुओं का ही ग्रंथ नहीं, युग विशेष का काव्य भी नहीं वरन् विश्वव्यापी सदैव सामयिक बनी रहने वाली कालजयी रचना है। तुलसीदास मात्र कवि नहीं थे, वे युगद्रष्टा संत पुरुष थे 'कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कर हित होई।'' विचारधारा के पोषक संत ने हरयुग की समस्याओं को अपने ज्ञान-चक्षुओं से देख लिया था। 21वीं सदी में जाति, धर्म एवं भाषागत समस्याएँ होंगीं, उत्तरकांड में तुलसीदास ने इसका उल्लेख पहले ही कर दिया था। सत्संग और सद्विचार के अभाव में भौतिक सुख एवं ऐन्द्रिय सुख को सर्वोपरि समझने वाली मनुष्य की अंधी दौड़ उसे अनेक समस्याओं के मकड़जाल में फांसती जा रही है। आज की समस्याओं के कारण और निवारण दोनों रामचरितमानस में हैं। रामचरितमानस की प्रासंगिकता को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं, वह स्वयंसिद्ध है।

आप सभी त्योहारों को प्रसन्नतापूर्वक मनाएं। इसी मंगल कामना के साथ- डॉ. शकुंतला कालरा

सार्वजनिक गणेशोत्सव के प्रणेता

लोकमान्य तिलक

लाल-बाल-पाल की त्रिमूर्ति का एक दुर्लभ चित्र जिसमें बायें से लाला लाजपतराय, बीच में लोक्मान्य तिलक जी और सबसे दायें श्री बिपिनचन्द्र पाल बैठे हैं

गोवर्धन दास बिन्नाणी 'राजा बाबू'
बीकानेर

राष्ट्रवादी, शिक्षक, समाज सुधारक, वकील,'पूर्ण स्वराज' के पैरोकार और भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रथम लोकप्रिय नेता बाल गंगाधर तिलक जो ६५ वर्ष की उम्र में १ अगस्त १९२० को मुम्बई से ही स्वर्गारोहण की और प्रस्थान कर गये, को उनकी १०२ वीं पुण्यतिथि पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए आपको याद दिलाना चाहूंगा कि इनको 'लोकमान्य' का आदरणीय उपाधि प्राप्त होने के कारण हम सभी उन्हें लोकमान्य तिलक के नाम से भी उल्लेख करते हैं ।

आप सभी के ध्याननार्थ बता दूँ कि बाल गंगाधर तिलक ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में नरमपंथी रवैये के विरुद्ध आवाज उठाने वाले श्री लाला लाजपत राय और श्री बिपिन चन्द्र पाल को समर्थन दिया, जिसके चलते इन तीनों को लाल–बाल–पाल के नाम से जाना जाने लगा। इस कारण से काँग्रेस अनेक सालों तक गरम दल और नरम दल में विभाजित रही।

इनके विषय में जितना लिखा जाये कम ही पड़ेगा। इसलिये दो महत्वपूर्ण तथ्य आप सभी के ध्यानार्थ अवश्य प्रस्तुत करना चाहूँगा। पहला तो यह है कि काँग्रेस में गरम दल के सदस्य होने के बावजूद इन्हें मरणोपरान्त श्रद्धाञ्जलि देते हुए नरम दल के गान्धी जी ने इन्हें आधुनिक भारत का निर्माता बताया तो पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारतीय क्रान्ति का जनक। दूसरा इनके बचपन से जुड़ा एक ऐतिहासिक तथ्य, जिसके अनुसार एक बार कक्षा में कुछ छात्रों ने मूंगफली के छिलके फर्श पर फेंक गन्दगी फैला दी। जिसके चलते कक्षा अध्यापक नाराजगी दर्शाते सभी को पूछा कि यह किसका काम है। लेकिन किसी भी छात्र ने अपनी गलती नहीं मानी। तब अध्यापक ने पूरी कक्षा को ही दंडित करने की घोषणा कर प्रत्येक छात्र के हाथों पर छड़ी से मारने लगे। लेकिन जब बाल गंगाधर तिलक की बारी आई तो उन्होंने हाथ आगे बढ़ाया ही नहीं बल्कि स्पष्ट कह दिया कि जब मैंने मुगफली खाई ही नहीं तो मैं बेंत भी नहीं खाऊंगा। यह सुन अध्यापक महोदय फिर पुछ बैठे कि बताओ यह किसने किया। इसके उत्तर में इन्होनें कह दिया की न तो मैं किसी का नाम बताऊंगा और न ही बेंत खाऊंगा । इसके फलस्वरूप जब अध्यापक महोदय ने इनकी शिकायत प्राचार्य से की तब इनके अभिभावक को स्कूल आना पड़ा और इनको स्कूल से निकाल दिया गया। यह घटना यह दर्शाती है कि

ये बचपन से ही कठोर अनुशासन का पालन करते हुये सच्चाई पर अडिग डटे रहते थे साथ ही साथ साथियों की अनुशासनहीनता की कभी चुगली नहीं करते थे। और इसी गुण के चलते ये हमेशा सभी के बीच आदरणीय बने रहे।

इन्होनें अपनी मृत्यु के करीबन चार साल पहले अप्रैल 1916 में 'होम रूल लीग' की स्थापना कर दी थी, जिसका इनकी मृत्यु पश्चात काँग्रेस में विलय हो गया। इस होम रूल आन्दोलन के चलते ही बाल गंगाधर तिलक को काफी प्रसिद्धी मिली क्योंकि उन्होनें इसी को माध्यम बना जनजागृति का कार्यक्रम का श्रीगणेश कर सर्वप्रथम पूर्ण स्वराज की मांग पर पूरा जोर लगा दिया क्योंकि उस समय तक उनके द्वारा मांडले/बर्मा, जेल में जाने के पहले 1897 में न्यायालय में न्यायाधीश के सामने मराठी भाषा में उनके द्वारा लगाया गया नारा 'स्वराज्य हा माझा जन्मसिद्ध हक्क आहे आणि तो मी मिळवणारच', जिसका हिन्दी मे अर्थ है 'स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर ही रहूँगा', लोकप्रिय के साथ साथ बहुत ही प्रसिद्ध हो चुका था यानि यह नारा भारतीय स्वाभिमान और गौरव का प्रेरणास्त्रोत के रूप में उभर चुका था। इन्होनें पूरे भारत के लिए समान लिपि के रूप में देवनागरी की वकालत भी पुरजोर से की थी । इन्हीं सब कारणों से उन्हे सार्वजनिक रूप से "लोकमान्य" अर्थात 'प्रिय नेता' की उपाधि से सम्मानित किया गया था।

अन्त में आपको बता दूँ कि जनजागृति वाली सोच इनके दिमाग में बहुत पहले से ही थी। यही कारण रहा जिसके चलते साल 1893 में इसी जनजागृति को स्थायित्व देने के उद्देश्य से इनके प्रयास के कारण महाराष्ट्र में गणेश उत्सव तथा शिवाजी उत्सव सार्वजनिक रूप से सप्ताह भर मनाना प्रारम्भ हुआ, जो आज इतना लोकप्रिय उत्सव बन, प्रसिद्धि के शिखर पर पूरे देश में जाना जाने लगा है, वह हम सभी बहुत बढ़िया से जानते हैं। इस सार्वजनिक रूप से मनाये जाने वाले गणेश उत्सव तथा शिवाजी उत्सव को लोकप्रिय बनाने में इनके स्वामित्व वाले दो समाचार पत्रों का अतुलनीय योगदान रहा था। इन दोनों मराठा दर्पण/जो अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होता था, एवं केसरी ख जो मराठी भाषा में प्रकाशित होता था, के ये जीवनपर्यन्त सम्पादक भी रहे। इसके अलावा इनके द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या को लेकर मांडले जेल में लिखी गयी गीता–रहस्य सर्वोत्कृष्ट कृति मानी जाती है, जिसका कई भाषाओं में अनुवाद भी हुआ है।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि इन्होनें अपने सिद्धांतों से बिना किसी भी प्रकार का समझौता किये सदैव पारम्परिक सनातन धर्म का मृत्यु पर्यन्त निर्वहन किया। इसके अलावा एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि सनातन धर्म के प्रति प्रगाढ़ आस्था रखते हुये भी इनके व्यक्तित्व में संकीर्णता कभी भी, लेशमात्र भी परिलक्षित नहीं हुयी। अतः हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि ये अपने समय के प्रणेता थे। इनके अद्वितीय देश प्रेम एवं सनातन धर्म के प्रति प्रगाढ़ आस्था के मद्देनजर ही इनको हिंदू राष्ट्रवाद का पिता भी कहा जाता है।

जीवन का सार

प्रीति मिश्रा
गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

जीवन का सार समक्ष मगर,
हम इनको स्वयं नकार रहे।

धर्म – कर्म, संस्कार को तज,
मिथ्या भ्रम को स्वीकार रहे।

स्वगुणों को कर लें आत्मसात,
प्रकृति की नियति साकार रहे।

हृदयागत है लालच अपार,
पुरुषार्थ को हम बिसार रहे।

क्यूँ असमंजस मे घिरकर हम,
स्वयं ही स्वयं से हार रहे।

सुंदर, पवित्र, अंतर्मन में,
भर कल्मष का भंडार रहे।

राग– द्वेष वशीभूत न हों,
मानवता पर निसार रहें।

निज अंतरात्मा ज्योतिर्मयी,
क्षणभंगुरता अंधकार रहे।

ऐश्वर्य की तिथि नाग पंचमी

नाग पंचमी के दिन सर्प के बारह नाम अनंत, वासुकि, शंख, पद्म, पिंगल, तक्षक, कालिया, शंखपाल, अश्वतर, घृतराष्ट्र, कर्कोटक और कम्बल का स्मरण करना चाहिए। नाग पंचमी पर नाग की पूजा करने से व्यक्ति का घर हमेशा धन- सम्पदा से परिपूर्ण रहता है।

बैजू के
अतिथि अध्यापक, हिन्दी विभाग
मार अथानासियस कॉलेज
कोतमंगलम, केरल

श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि को नाग पंचमी त्योहार मनाया जाता है। इस दिन नाग देवता की पूजा की जाती है। हिन्दू धर्म के अनुसार नाग भगवान का रूप है। इसलिए इस दिन लोग नाग की पूजा पूरी विधि – विधान से करते हैं। ऐसी मान्यता है कि जो लोग नाग की पूजा करते हैं उन्हें सांप से कभी कोई हानि नहीं होती। उनकी मृत्यु कभी सांप के काटने से नहीं होती है।

नाग पंचमी कहानी – इस पूजा से जुडी एक कथा है। जिसका बहुत महत्त्व है। एक नगर में एक व्यापारी निवास करता था। उसके सात पुत्र थे। उन सातों पुत्रों का विवाह हो चुका था। उन सातों बहुओं में से सबसे छोटी बहु विदुषी, सुशील और अच्छे चरित्रवान वाली स्त्री थी।एक दिन सबसे बड़ी बहु ने सारी बहुओं से कहा कि घर को लीपने के लिए पीली मिट्टी की जरुरत है। हम सब बाहर चलकर खेतों से पीली मिट्टी ले आते हैं। तब सारी बहुएँ एक साथ डलिया और खुरपी लेकर चल दीं। जब वे बहुएँ मिट्टी खोद रहीं थीं तभी अचानक पेड़ के पास से एक सर्प निकला।

ऐसा देख कर सब डर गयीं। तब बड़ी बहु ने सर्प को खुरपी से मारना चाहा। लेकिन छोटी बहु ने ऐसा करने से उसे मना कर दिया। उसने कहा कि सर्प को नहीं मारना चाहिए, वह निरापराध है। ऐसा सुनकर बड़ी बहु छोटी बहु से नाराज हो गयी। फिर भी छोटी बहु के कहे अनुसार किसी ने भी उस सर्प को नहीं मारा।तब छोटी बहु ने सर्प के सम्मुख हाथ जोड़कर कहा कि हे नाग ! आप यहीं रुकिए मैं घर जाकर दूध लेकर आती हूँ। तब वहां से सारी बहुएँ चली गयीं। जब वे घर चली गयीं तब घर जाकर छोटी बहु घर के कार्यों में इतनी उलझ गयी कि उसे याद ही नहीं रहा कि उसने सर्प को वहां इंतजार करने के लिए कहा था।उसे अगले दिन याद आया और वह दौड़ती हुई दूध लेकर खेत में पहुंची। वह सर्प वहीँ पर उसका इंतजार कर रहा था। तब उसने सर्प को कटोरी में दूध दिया और माफी मांगी। तब सर्प ने कहा कि कल तुमने मेरी जान बचाई है इस कारण मैं तुम्हे अपनी बहन मानता हूँ।

इसलिए मैंने तुम्हे डसा नहीं क्योंकि कल तुमने मुझे यहीं इंतजार करने को कहा था लेकिन तुम भूल गयीं। लेकिन मेरी जान बचाने के कारण अब मैं तुम्हे अपनी बहन मानने लगा हूँ। इस तरह के वचन सुनकर वह छोटी बहु भी उस सर्प को अपना भाई मानने लगी। इसके बाद दोनों अपने – अपने घर चले गए। फिर एक दिन वह सर्प मानव शरीर धारण कर अपनी छोटी बहन के यहाँ पहुँच गया। उसने कहा कि मैं आपकी छोटी बहु का भाई हूँ और उसे लेने आया हूँ। तब वहां उपस्थित सभी लोग आश्चर्यचकित हो उठे क्योंकि छोटी बहु के मायके में तो कोई उसका भाई नहीं है। फिर ये कौन सा नया भाई आ गया। तब सर्प ने बोला कि मैं

रिश्तेदार में आता हूँ, बचपन से ही दूर कहीं रह रहा था। अब मैं अपनी बहन को लेने आया हूँ। तब ससुराल वालों को विश्वास हुआ और छोटी बहु को उसके साथ भेज दिया।तब रास्ते में उस सर्प ने बहन को बताया कि मैं वही सर्प हूँ जिसकी तुमने जान बचायी थी। तुम मुझसे डरना नहीं। मैंने अभी इंसान शरीर धारण किया है। तुम मेरे घर चलो वहां सभी तुम्हारा स्वागत करेंगे। तुमको जब भी डर लगे तो मुझे याद कर लेना, मैं वहां प्रकट हो जाऊंगा।

तुम्हे वहां कोई भी कुछ भी नुकसान नहीं पहुंचाएगा। तब दोनों घर पहुँच गए। छोटी बहु ने देखा कि सर्प का घर बहुत सुन्दर है, धन, ऐश्वर्य की कोई कमी नहीं है। इस तरह छोटी बहु अपने नए मायके में रहने लगी। जब वह छोटी बहु वहां ज्योति जलाकर पूजा करती थी तो उस ज्योति को नाग के मस्तक पर रख देती थी।एक दिन उस नाग को गुस्सा आया लेकिन उसने सोचा चलो कोई बात नहीं क्योंकि ये अपने घर मेहमान बनकर आयी है। लेकिन अगले दिन बहु ने भूल वश फिर से वैसा ही किया। तब नाग को गुस्सा आया और उसने नागिन से कहा कि ये रोज ऐसा ही करती है , दीपक को मेरे मस्तक पर रख देती है जिससे मेरा मस्तक जल गया है।

आज रात को मैं इसे डस लूंगा। नागिन ने कहा कि ऐसा मत करना क्योंकि ये अपने यहाँ मेहमान बनकर आयी है। जब यह अपने घर वापस जाएगी तब आप इसे डस लेना। अभी इसको डसना नहीं चाहिए क्योंकि अभी ये अपने यहाँ बेटी के रूप में आयी है और इसने अपने बेटे की जान भी बचाई है। तब नाग मान गया। कुछ दिन बाद छोटी बहु को उसके मायके से विदा किया गया, साथ में बहुत से हीरे जवाहरात भी दिए गए। एक ऐसा हार दिया गया जो बहुत सुन्दर और हीरे जड़ित था। उस हार की चर्चा दूर – दूर तक फैल गयी कि छोटी बहु को उसके मायके से अद्‌भुत हीरे का हार मिला है।

इस बात की खबर वहां की रानी को भी लगी और उसने राजा से कहा कि उसे वही हार चाहिए। तब राजा ने मंत्री को आदेश दिया कि जाओ वह हार उस व्यापारी के यहाँ से ले आओ क्योंकि वही हार रानी को चाहिए। तब मंत्री वह हार उस व्यापारी के यहाँ से ले आया और डर के कारण व्यापारी को वह हार उसे देना पड़ा। तब छोटी बहु बहुत दुखी हुई और अपने भाई को याद किया। तब वहां उसका भाई नाग प्रकट हो गया। उसने सारा वृतांत कह सुनाया और कहा कि भाई कुछ ऐसा करो कि वह रानी जब भी उस हार को पहने तो वह सांप बन जाये और जब मेरे पास आये तो वह फिर से हार बन जाये।

एक दिन रानी ने वह हार पहना और वह सांप बन गया तब उसने डर के कारण वह हार फेंक दिया और हार वापस व्यापारी को भिजवा दिया। छोटी बहु अपने भाई से बहुत खुश हुई। उधर दूसरी तरफ वह नाग उस बहु को डसने के लिए आना चाह रहा था लेकिन नागिन उसे रोक रही थी।एक दिन उस नाग ने निर्णय किया कि आज तो वह वहां जायेगा और उसे डस ही लेगा। उस दिन श्रावण मास की शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि थी।जब वह नाग छोटी बहु के यहाँ पहुंचा तो देखा कि वह विधि–विधान से नाग की पूजा कर रही थी और कच्चा दूध अर्पण कर रही थी। यह देख कर नाग प्रसन्न हुआ कि यह नाग की पूजा कर रही है और इसने उस दिन मेरे बेटे की जान भी बचाई थी।

इसने मेरे मस्तक पर दीपक रखकर मुझे जलाया नहीं होगा बल्कि भूलवश ऐसा किया होगा। अब मैं इसे नहीं डसूंगा। उस नाग ने जाते–जाते उसे वरदान दिया कि तुम्हारा घर हमेशा धन–समृद्धि से भरा रहेगा, कभी भी किसी भी चीज की कमी नहीं रहेगी। इस प्रकार उस तिथि को हमेशा नाग पंचमी के रूप में मनाया जाता है और नाग देवता की पूजा की जाती है।

जीवन दर्शन

एक खोज : सत्य की

ज्योति मिश्रा शुक्ला
एडवोकेट
भोपाल

कभी–कभी सब छोड़–छाड़ कर भाग जाने का मन करता है, तब इंसान कहां जाए और क्या करें? भोलेनाथ की नगरी बनारस चले जाएं। अपने परिवार की एक फोटो जरूर ले जाए। सिर्फ दो–तीन घंटे बैठ जाए मणिकर्णिका खाट पर घाट पर, उठती हुई चिता की लपटों में खो जाए। आपको अपनी सारी तकलीफ, चिंता, दुख, परेशानी, उम्मीदें, कर्ज, झगड़े, डिग्री, बेरोजगारी, बीमारी सब कुछ उन चिताओं की आग में जलती हुई दिखेगी।

कुछ समय के लिए आप सोचे की आप से पहले भी आपसे अच्छे लोग थे और आप के बाद भी होंगे लेकिन सबकी अंतिम अवस्था सिर्फ और सिर्फ एक लोटा भर राख है। फिर जेब से अपने परिवार की फोटो निकाल कर एक बार सबका चेहरा देखो।

फिर सोचे की महादेव ने आपको परिवार के रूप में कितना कीमती तोहफा दिया है। अगर आप भागे तो दुनिया के किसी इंसान तो क्या, किसी जानवर तक को आपके भाग जाने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा, लेकिन इस परिवार का क्या होगा?

फिर एक लोटा खरीदें, उसमें गंगाजल लेकर अपनी सारी परेशानियों को उसी गंगाजल में घोलकर भोलेनाथ को चढ़ाकर त्रिपुंड लगाकर लौट आए और भरोसा रखें की जो महादेव, कामदेव को एक सेकंड में भस्म कर सकते हैं वह आपकी परेशानियों को भी भस्म कर देंगे। ॐ नमः शिवाय

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

द्वारा

13 जुलाई 2022 को गुरु पूर्णिमा महोत्सव

पर इंदौर, उज्जैन, मुजफ्फरनगर एवं बिलासपुर में महाप्रसादी (भोजन) वितरण कार्यक्रम

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा 13 जुलाई 2022 दिन बुधवार को गुरु पूर्णिमा के पावन पर्व पर महायोगी गुरु गोरक्षनाथ जी की स्तुति-वंदना के उपरांत फाउण्डेशन के समस्त पदाधिकारियों और सदस्यों के द्वारा इंदौर, उज्जैन (मध्य प्रदेशद्ध) मुजफ्फरनगर (उत्तर प्रदेश) एवं बिलासपुर (छत्तीसगढ) में गरीब बेसहारा बच्चों, वृद्धजनों, मरीजों को हॉस्पिटल, गरीब बस्तियों में खिचडी भोग, भोजन (महाप्रसादी) का वितरण किया गया।

उज्जैन, मध्य प्रदेश

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

द्वारा

13 जुलाई 2022 को गुरु पूर्णिमा महोत्सव

पर इंदौर, उज्जैन, मुजफ्फरनगर एवं बिलासपुर में महाप्रसादी (भोजन) वितरण कार्यक्रम

मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

द्वारा

13 जुलाई 2022 को गुरु पूर्णिमा महोत्सव

पर इंदौर, उज्जैन, मुजफ्फरनगर एवं बिलासपुर में महाप्रसादी (भोजन) वितरण कार्यक्रम

इंदौर, मध्य प्रदेश

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

द्वारा

13 जुलाई 2022 को गुरु पूर्णिमा महोत्सव

पर इंदौर, उज्जैन, मुजफ्फरनगर एवं बिलासपुर में महाप्रसादी (भोजन) वितरण कार्यक्रम

बिलासपुर, छत्तीसगढ़

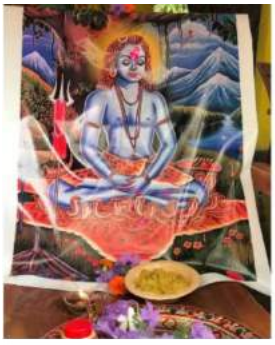

यज्ञ क्या है, और क्यों है, इसका महत्व ?

शारीरिक जन्म तो संसार में आने का बहाना मात्र है लेकिन वास्तविक जन्म तो वही है जब इंसान अपनी अंतः प्रज्ञा से जागता है, जिसका एक माध्यम है 'यज्ञ'।यज्ञ की पहचान है 'अग्नि' या यूं कहें 'अग्नि', यज्ञ का अहम हिस्सा है जो कि प्रतीक है शक्ति की, ऊर्जा की, सदा ऊपर उठने की।

डॉ. विदुषी शर्मा
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
अकादमिक काउंसलर, IGNOU
शोध निर्देशक, JJTU
विशेषज्ञ, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग, भारत सरकार
OSD , (Officer on Special Duty) NIOS
दिल्ली

भगवद्गीता के अनुसार परमात्मा के निमित्त किया कोई भी कार्य यज्ञ कहा जाता है। हमारी प्राचीन संस्कृति को अगर एक ही शब्द में समेटना हो तो वह है यज्ञ। 'यज्ञ' शब्द संस्कृत की यज् धातु से बना हुआ है जिसका अर्थ होता है दान, देवपूजन एवं संगतिकरण।

भारतीय संस्कृति में यज्ञ का व्यापक अर्थ है, यज्ञ मात्र अग्निहोत्र को ही नहीं कहते हैं वरन् परमार्थ परायण कार्य भी यज्ञ है। यज्ञ स्वयं के लिए नहीं किया जाता है बल्कि सम्पूर्ण विश्व के कल्याण के लिए किया जाता है।

यज्ञ का प्रचलन वैदिक युग से है, वेदों में यज्ञ की विस्तार से चर्चा की गयी है, बिना यज्ञ के वेदों का उपयोग कहां होगा और वेदों के बिना यज्ञ कार्य भी कैसे पूर्ण हो सकता है।

अस्तु यज्ञ और वेदों का अन्योन्याश्रय संबंध है। जिस प्रकार मिट्टी में मिला अन्न कण सौ गुना हो जाता है, उसी प्रकार अग्नि से मिला पदार्थ लाख गुना हो जाता है। अग्नि के सम्पर्क में कोई भी द्रव्य आने पर वह सूक्ष्मीभूत होकर पूरे वातावरण में फैल जाता है और अपने गुण से लोगों को प्रभावित करता है।

इसको इस तरह समझ सकते हैं कि जैसे लाल मिर्च को अग्नि में डालने पर वह अपने गुण से लोगों को प्रताडित करती है इसी तर सामग्री में उपस्थित स्वास्थ्यवर्धक औषधियां जब यज्ञाग्नि के सम्पर्क में आती है तब वह अपना औषधीय प्रभाव व्यक्ति के स्थूल व सूक्ष्म शरीर पर दिखाती है और व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करता चला जाता है।

मनुष्य के शरीर में स्नायु संस्थान, श्वसन संस्थान, पाचन संस्थान, प्रजनन संस्थान, मूत्र संस्थान, कंकाल संस्थान, रक्तवह संस्थान आदि सहित अन्य अंग होते हैं उपरिलिखित हवन सामग्री में इन सभी संस्थानों व शरीर के सभी अंगों को स्वास्थ्य प्रदान करने वाली औषधियां मिश्रित हैं।

यह औषधियां जब यज्ञाग्नि के सम्पर्क में आती हैं तब सूक्ष्मीभूत होकर वातावरण में व्याप्त हो जाती हैं जब मनुष्य इस वातावरण में सांस लेता है तो यह सभी औषधियां अपने – अपने गुणों के अनुसार हमारे शरीर को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करती हैं।

इसके अलावा हमारे मनरूपी सूक्ष्म शरीर को भी स्वस्थ रखती हैं। यज्ञ की महिमा अनन्त है। यज्ञ से आयु, आरोग्यता, तेजस्विता, विद्या, यश, पराक्रम, वंशवृद्धि, धन–धन्यादि, सभी प्रकार का राज–भोग, ऐश्वर्य, लौकिक एवं पारलौकिक वस्तुओं की प्राप्ति होती है।

प्राचीन काल से लेकर अब तक **रुद्रयज्ञ, सूर्ययज्ञ, गणेशयज्ञ, लक्ष्मीयज्ञ, श्रीयज्ञ, लक्ष. चंडी भागवत यज्ञ, विष्णुयज्ञ, ग्रह–शांति यज्ञ, पुत्रेष्टि, शत्रुंजय, राजसूय, ज्योतिष्टोम, अश्वमेध, वर्षायज्ञ, सोमयज्ञ, गायत्री** यज्ञ इत्यादि अनेक प्रकार के यज्ञ होते चले आ रहे हैं।

हमारा शास्त्र, इतिहास, यज्ञ के अनेक चमत्कारों से भरा पड़ा है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी सोलह–संस्कार यज्ञ से ही प्रारंभ होते हैं एवं यज्ञ में ही समाप्त हो जाते हैं।

क्योंकि यज्ञ करने से व्यष्टि नहीं अपितु समष्टि का कल्याण होता है। अब इस बात को वैज्ञानिक मानने लगे हैं कि यज्ञ करने से वायुमंडल एवं पर्यावरण में शुद्धता आती है।

संक्रामक रोग नष्ट होते हैं तथा समय पर वर्षा होती है। यज्ञ करने से सहबन्धुत्व की सद्भावना के साथ विकास में शांति स्थापित होती है।यज्ञ को वेदों में 'कामधेनु' कहा गया है अर्थात् मनुष्य के समस्त अभावों एवं बाधाओं को दूर करने वाला। 'यजुर्वेद' में कहा गया है कि जो यज्ञ को त्यागता है उसे परमात्मा त्याग देता है।

यज्ञ के द्वारा ही साधारण मनुष्य देव–योनि प्राप्त करते हैं और स्वर्ग के अधिकारी बनते हैं। यज्ञ को सर्व कामना पूर्ण करने वाली कामधेनु और स्वर्ग की सीढ़ी कहा गया है। इतना ही नहीं यज्ञ के जरिए आत्म–साक्षात्कार और ईश्वर प्राप्ति भी संभव है।यज्ञ भारतीय संस्कृति का आदि प्रतीक है।

शास्त्रों में गायत्री को माता और यज्ञ को पिता माना गया है। कहते हैं इन्हीं दोनों के संयोग से मनुष्य का दूसरा यानी आध्यात्मिक जन्म होता है जिसे द्विजत्व कहा गया है। एक जन्म तो वह है जिसे इंसान शरीर के रूप में माता–पिता के जरिए लेता है। यह तो सभी को मिलता है लेकिन आत्मिक रूपांतरण द्वारा आध्यात्मिक जन्म यानी दूसरा जन्म किसी किसी को ही मिलता है।

शारीरिक जन्म तो संसार में आने का बहाना मात्र है लेकिन वास्तविक जन्म तो वही है जब इंसान अपनी अंतः प्रज्ञा से जागता है, जिसका एक माध्यम है 'यज्ञ'।यज्ञ की पहचान है 'अग्नि' या यूं कहें 'अग्नि', यज्ञ का अहम हिस्सा है जो कि प्रतीक है शक्ति की, ऊर्जा की, सदा ऊपर उठने की।

शास्त्रों में अग्नि को ईश्वर भी कहा गया है इसी अग्नि में ताप भी छिपा है तो भाप भी छिपी है। यही अग्नि जलाती भी है तो प्रकाश भी देती है। इसी अग्नि के माध्यम से जल भी बनता है और जल मात्र मानव जीवन के लिए ही नहीं बल्कि पूरी प्रकृति के लिए वरदान है, अमृत है।

इसीलिए अग्नि इतनी पूजनीय है। एक प्रकार से अग्नि ही ईश्वर है तभी तो अग्नि इतनी पूजनीय है। यही कारण है कि हर धर्म एवं सम्प्रदाय में अग्नि का इतना महत्व है तथा उसे किसी न किसी रूप में जलाया व पूजा जाता है। और यज्ञ भी एक तरह की पूजा है।

यदि यज्ञ में जलती अग्नि ईश्वर है तो अग्नि का मुख ईश्वर का मुख है। यज्ञ में कुछ भी आहुति करने का अर्थ है परमात्मा को भोजन कराना। इसलिए अग्नि को जो कुछ खिलाया जाता है वह सही अर्थो में ब्राह्मभोज है। जिस तरह भगवान सबको खिलाता है उसी तरह यज्ञ के जरिए इंसान भगवान को खिलाता है।यज्ञ परमात्मा तक पहुंचने का सोपान है।

उसका सान्निध्य पाने का माध्यम है। यज्ञ में प्रकट अग्नि साक्षात् भगवान है। इसीलिए यज्ञ में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए तथा उसे बनाए रखने के लिए यज्ञ या हवन सामग्री का भी विशेष स्थान है। यह सामग्री न केवल भगवान के भोजन का हिस्सा बनती है बल्कि इससे उठने वाला धुआं वायुमंडल को शुद्ध करता है।

सत्य सनातन धर्म सदैव हितकारी है।

स्वतंत्रता दिवस पर

अशोक चक्र एवं अशोक स्तभ ,बान शान का प्रतीक

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

अशोक चक्र को भारत में 'धर्म चक्र' माना गया है। इस धर्म चक्र को 'विधि का चक्र' कहते हैं, जो तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में मौर्य सम्राट अशोक द्वारा बनाए गए सारनाथ मंदिर से लिया गया है। इस चक्र को प्रदर्शित करने का आशय यह है कि– जीवन गतिशील है और रुकने का अर्थ मृत्यु है।

मौर्य राजवंश के महान् शासक सम्राट अशोक के बहुत से शिलालेखों पर प्रायः एक 'चक्र' (पहिया) बना हुआ है। इसे 'अशोक चक्र' कहते हैं। यह चक्र धर्म चक्र का प्रतीक है। उदाहरण के लिये सारनाथ स्थित सिंह–चतुर्मुख एवं अशोक स्तम्भ पर अशोक चक्र विद्यमान है। सम्राट अशोक के बहुत से शिलालेखों पर प्रायः एक चक्र (पहिया) बना हुआ है इसे अशोक चक्र कहते हैं। यह चक्र 'धर्मचक्र' का प्रतीक है. उदाहरण के लिये सारनाथ स्थित सिंह–चतुर्मुख (लॉयन कपिटल) एवं अशोक स्तम्भ पर अशोक चक्र विद्यमान है। भारत के राष्ट्रीय ध्वज में अशोक चक्र को स्थान दिया गया है। भारत के राष्ट्रीय ध्वज में भी अशोक चक्र को दर्शाया गया है। अशोक चक्र में चौबीस तीलियाँ (स्पोक्स) हैं, जो दिन के चौबीस घंटो का प्रतीक हैं।

अशोक चक्र को कर्तव्य का पहिया भी कहा जाता है। ये 24 तीलियाँ मनुष्य के 24 गुणों को दर्शातीं हैं। दूसरे शब्दों में इन्हें मनुष्य के लिए बनाये गए 24 धर्म मार्ग भी कहा जा सकता है। अशोक चक्र में बताये गए सभी धर्म मार्ग किसी भी देश को उन्नति के पथ पर पहुंचा देंगे। शायद यही कारण है कि हमारे रष्ट्र ध्वज के निर्माताओं ने जब इसका अंतिम रूप फाइनल किया तो उन्होंने झंडे के बीच में चरखे को हटाकर इस अशोक चक्र को रखा था।

1 **पहली तीली** : संयम (संयमित जीवन जीने की प्रेरणा देती है)

2. **दूसरी तीली** : आरोग्य (निरोगी जीवन जीने के लिए प्रेरित करती है)

3. **तीसरी तीली** : शांति (देश में शांति व्यवस्था कायम रखने की सलाह)

4. चौथी तीली : त्याग (देश एवं समाज के लिए त्याग की भावना का विकास)

5. पांचवीं तीली : शील (व्यक्तिगत स्वभाव में शीलता की शिक्षा)

6. छठवीं तीली : सेवा (देश एवं समाज की सेवा की शिक्षा)

7. सातवीं तीली : क्षमा (मनुष्य एवं प्राणियों के प्रति क्षमा की भावना)

8. आठवीं तीली : प्रेम (देश एवं समाज के प्रति प्रेम की भावना)

9. नौवीं तीली : मैत्री (समाज में मैत्री की भावना)

10. दसवीं तीली : बन्धुत्व (देश प्रेम एवं बंधुत्व को बढ़ावा देना)

11. ग्यारहवीं तीली : संगठन (राष्ट्र की एकता और अखंडता को मजबूत रखना)

12. बारहवीं तीली : कल्याण (देश व समाज के लिये कल्याणकारी कार्यो में भाग लेना)

13. तेरहवीं तीली : समृद्धि (देश एवं समाज की समृद्धि में योगदान देना)

14. चौदहवीं तीली : उद्योग (देश की औद्योगिक प्रगति में सहायता करना)

15. पंद्रहवीं तीली : सुरक्षा (देश की सुरक्षा के लिए सदैव तैयार रहना)

16. सौलहवीं तीली : नियम (निजी जिंदगी में नियम संयम से बर्ताव करना)

17. सत्रहवीं तीली : समता (समता मूलक समाज की स्थापना करना)

18. अठारहवी तीली : अर्थ (धन का सदुपयोग करना)

19. उन्नीसवीं तीली : नीति (देश की नीति के प्रति निष्ठा रखना)

20. बीसवीं तीली : न्याय (सभी के लिए न्याय की बात करना)

21. इक्कीसवीं तीली : सहकार्य (आपस में मिलजुल कार्य करना)

22. बाईसवीं तीली : कर्तव्य (अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन करना)

23. तेईसवी तीली : अधिकार (अधिकारों का दुरूपयोग न करना)

24. चौबीसवीं तीली : बुद्धिमत्ता (देश की समृधि के लिए स्वयं का बौद्धिक विकास करना)

अशोक चक्र में दी गयी हर एक तीली का अपना मतलब है। सभी तीलियाँ सम्मिलित रूप से देश और समाज के चहुमुखी विकास की बात करती हैं। ये तीलियाँ सभी देशवासियों को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में स्पष्ट सन्देश देने के साथ साथ यह भी बतातीं हैं कि हमें अपने रंग, रूप, जाति और धर्म के अंतरों को भुलाकर पूरे देश को एकता के धागे में पिरोकर देश को समृद्धि के शिखर तक ले जाने के लिए सतत प्रयास करते रहना चाहिए।

'चक्र' का अर्थ संस्कृत में पहिया होता है। किसी बार-बार दुहराने वाली प्रक्रिया को भी 'चक्र' कहा जाता है। चक्र स्वतः परिवर्तित होते रहने वाले समय का प्रतीक है। हिन्दू मान्यताओं के अनुसार संसार को चार युगों से होकर गुजरना पड़ता है, जिन्हें सतयुग, त्रेता, द्वापर एवं कलि के नाम से जाना जाता है।

कुछ लोग इन तीलियों का एक अन्य अर्थ भी लगाते हैं, जिसके अनुसार चक्र की चौबीस तीलियाँ भारतवासियों की एकता का पतीक हैं।

अशोक चिह्न भारत का राजकीय प्रतीक है। इसको सारनाथ में मिली अशोक लाट से लिया गया है। मूल रूप इसमें चार शेर हैं जो चारों दिशाओं की ओर मुंह किए खड़े हैं। इसके नीचे एक गोल आधार है जिस पर हाथी, घोड़ा, एक सांड़ और एक सिंह बने हैं जो दौड़ती हुई मुद्रा में है।

महान सम्राट अशोक द्वारा 250 ईसा पूर्व में सारनाथ में बनवाया गया। यह स्तम्भ दुनिया भर में प्रसिद्ध है, इसे अशोक स्तम्भ के नाम से भी जाना जाता है। इस स्तम्भ में चार शेर एक दूसरे से पीठ से पीठ सटा कर बैठे हुए है। यह स्तम्भ सारनाथ के संग्रहालय में रखा हुआ है।

भारत ने इस स्तम्भ को अपने राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में अपनाया है तथा स्तम्भ के निचले भाग पर स्थित अशोक चक्र को तिरंगे के मध्य में रखा है ।

मुख्य मंदिर से पश्चिम की ओर एक अशोककालीन प्रस्तर-स्तंभ है जिसकी ऊँचाई प्रारंभ में 17.55 मी. (55 फुट) थी। वर्तमान समय में इसकी ऊँचाई केवल 2.03 मीटर (7 फुट 9 इंच) है। स्तंभ का ऊपरी सिरा अब सारनाथ संग्रहालय में है। नींव में खुदाई करते समय यह पता चला कि इसकी स्थापना 8 फुट X 16 फुट X 18 इंच आकार के बड़े पत्थर के चबूतरे पर हुई थी। इस स्तंभ पर तीन लेख उल्लिखित हैं। पहला लेख अशोक कालीन ब्राह्मी लिपि में है जिसमें सम्राट ने आदेश दिया है कि जो भिछु या भिक्षुणी संघ में फूट डालेंगे और संघ की निंदा करेंगे: उन्हें सफेद कपड़े पहनाकर संघ के बाहर निकाल दिया जाएगा। दूसरा लेख कुषाण-काल का है। तीसरा लेख गुप्त काल का है, जिसमें सम्मितिय शाखा के आचार्यो का उल्लेख किया गया है।

अशोक चक्र एवं अशोक स्तम्भ भारत की शान, बान का प्रतीक हैं।

श्रावण मास का आध्यात्मिक महत्व

पंडित रूपम व्यास

संकलन
भगवान श्री कृष्ण की शिक्षास्थली
महर्षि सांदीपनी आश्रम
उज्जैप, मध्य प्रदेश

श्रावण अथवा सावन हिंदु पंचांग के अनुसार वर्ष का पाँचवा महीना ईस्वी कलेंडर के जुलाई या अगस्त माह में पड़ता है। इस वर्ष श्रावण मास 14 जुलाई से 12 अगस्त तक रहेगा। इसे वर्षा ऋतु का महीना या 'पावस ऋतु' भी कहा जाता है, क्योंकि इस समय बहुत वर्षा होती है। इस माह में अनेक महत्त्वपूर्ण त्योहार मनाए जाते हैं, जिसमें 'हरियाली तीज', 'रक्षाबन्धन', 'नागपंचमी' आदि प्रमुख हैं। 'श्रावण पूर्णिमा' को दक्षिण भारत में 'नारियली पूर्णिमा' व 'अवनी अवित्तम', मध्य भारत में 'कजरी पूनम', उत्तर भारत में 'रक्षाबंधन' और गुजरात में 'पवित्रोपना' के रूप में मनाया जाता है। त्योहारों की विविधता ही तो भारत की विशिष्टता की पहचान है। 'श्रावण' यानी सावन माह में भगवान शिव की अराधना का विशेष महत्त्व है। इस माह में पड़ने वाले सोमवार 'सावन के सोमवार' कहे जाते हैं, जिनमें स्त्रियाँ तथा विशेषतौर से कुंवारी युवतियाँ भगवान शिव के निमित्त व्रत आदि रखती हैं।

महादेव को प्रिय सावन : सावन माह के बारे में एक पौराणिक कथा है कि– 'जब सनत कुमारों ने भगवान शिव से उन्हें सावन महीना प्रिय होने का कारण पूछा तो भगवान भोलेनाथ ने बताया कि जब देवी सती ने अपने पिता दक्ष के घर में योगशक्ति से शरीर त्याग किया था, उससे पहले देवी सती ने महादेव को हर जन्म में पति के रूप में पाने का प्रण किया था। अपने दूसरे जन्म में देवी सती ने पार्वती के नाम से हिमाचल और रानी मैना के घर में पुत्री के रूप में जन्म लिया। पार्वती ने युवावस्था के सावन महीने में निराहार रह कर कठोर व्रत किया और शिव को प्रसन्न कर उनसे विवाह किया, जिसके बाद ही महादेव के लिए यह विशेष हो गया।

इसके अतिरिक्त एक अन्य कथा के अनुसार, मरकंडू ऋषि के पुत्र मारकण्डेय ने लंबी आयु के लिए सावन माह में ही घोर तप कर शिव की कृपा प्राप्त की थी, जिससे मिली मंत्र शक्तियों के सामने मृत्यु के देवता यमराज भी नतमस्तक हो गए थे।

भगवान शिव को सावन का महीना प्रिय होने का अन्य कारण यह भी है कि भगवान शिव सावन के महीने में पृथ्वी पर अवतरित होकर अपनी ससुराल गए थे और वहां उनका स्वागत अर्घ्य और जलाभिषेक से किया गया था। माना जाता है कि प्रत्येक वर्ष सावन माह में भगवान शिव अपनी ससुराल आते हैं। भू–लोक वासियों के लिए शिव कृपा पाने का यह उत्तम समय होता है।

पौराणिक कथाओं में वर्णन आता है कि इसी सावन मास में समुद्र मंथन किया गया था। समुद्र मथने के बाद जो हलाहल विष निकला, उसे भगवान शंकर ने कंठ में समाहित कर सृष्टि की रक्षा कीय लेकिन विषपान से महादेव का कंठ नीलवर्ण हो गया। इसी से उनका नाम 'नीलकंठ महादेव' पड़ा। विष के प्रभाव को कम करने के लिए सभी देवी–देवताओं ने उन्हें जल अर्पित किया। इसलिए शिवलिंग पर जल चढ़ाने का खास महत्व है। यही वजह है कि श्रावण मास में भोले को जल चढ़ाने से विशेष फल की प्राप्ति होती है। 'शिवपुराण' में उल्लेख है कि भगवान शिव स्वयं ही जल हैं। इसलिए जल से उनकी अभिषेक के रूप में अराधना का उत्तमोत्तम फल है, जिसमें कोई संशय नहीं है।

शास्त्रों में वर्णित है कि सावन महीने में भगवान विष्णु योगनिद्रा में चले जाते हैं। इसलिए ये समय भक्तों, साधु–संतों सभी के लिए अमूल्य होता है। यह चार महीनों में होने वाला एक वैदिक यज्ञ है, जो एक प्रकार का पौराणिक व्रत है, जिसे 'चौमासा' भी कहा जाता हैय

तत्पश्चात सृष्टि के संचालन का उत्तरदायित्व भगवान शिव ग्रहण करते हैं। इसलिए सावन के प्रधान देवता भगवान शिव बन जाते हैं।

शिव की पूजा : सावन मास में भगवान शंकर की पूजा उनके परिवार के सदस्यों संग करनी चाहिए। इस माह में भगवान शिव के 'रुद्राभिषेक' का विशेष महत्त्व है। इसलिए इस मास में प्रत्येक दिन 'रुद्राभिषेक' किया जा सकता है, जबकि अन्य माह में शिववास का मुहूर्त देखना पड़ता है। भगवान शिव के रुद्राभिषेक में जल, दूध, दही, शुद्ध घी, शहद, शक्कर या चीनी, गंगाजल तथा गन्ने के रस आदि से स्नान कराया जाता है। अभिषेक कराने के बाद बेलपत्र, शमीपत्र, कुशा तथा दूब आदि से शिवजी को प्रसन्न करते हैं। अंत में भांग, धतूरा तथा श्रीफल भोलेनाथ को भोग के रूप में चढ़ाया जाता है। शिवलिंग पर बेलपत्र तथा शमीपत्र चढ़ाने का वर्णन पुराणों में भी किया गया है। बेलपत्र भोलेनाथ को प्रसन्न करने के शिवलिंग पर चढ़ाया जाता है। कहा जाता है कि 'आक' का एक फूल शिवलिंग पर चढ़ाने से सोने के दान के बराबर फल मिलता है। हजार आक के फूलों की अपेक्षा एक कनेर का फूल, हजार कनेर के फूलों को चढ़ाने की अपेक्षा एक बिल्व पत्र से दान का पुण्य मिल जाता है। हजार बिल्वपत्रों के बराबर एक द्रोण या गूमा फूल फलदायी होते हैं। हजार गूमा के बराबर एक चिचिड़ा, हजार चिचिड़ा के बराबर एक कुश का फूल, हजार कुश फूलों के बराबर एक शमी का पत्ता, हजार शमी के पत्तों के बराकर एक नीलकमल, हजार नीलकमल से ज्यादा एक धतूरा और हजार धतूरों से भी ज्यादा एक शमी का फूल शुभ और पुण्य देने वाला होता है।

बेलपत्र : भगवान शिव को प्रसन्न करने का सबसे सरल तरीका उन्हें 'बेलपत्र' अर्पित करना है। बेलपत्र के पीछे भी एक पौराणिक कथा का महत्त्व है। इस कथा के अनुसार– भील नाम का एक डाकू था। यह डाकू अपने परिवार का पालन–पोषण करने के लिए लोगों को लूटता था। एक बार सावन माह में यह डाकू राहगीरों को लूटने के उद्देश्य से जंगल में गया और एक वृक्ष पर चढ़कर बैठ गया। एक दिन–रात पूरा बीत जाने पर भी उसे कोई शिकार नहीं मिला। जिस पेड़ पर वह डाकू छिपा था, वह बेल का पेड़ था। रात–दिन पूरा बीतने पर वह परेशान होकर बेल के पत्ते तोड़कर नीचे फेंकने लगा। उसी पेड़ के नीचे एक शिवलिंग स्थापित था। जो पत्ते वह डाकू तोडकर नीचे फेंख रहा था, वह अनजाने में शिवलिंग पर ही गिर रहे थे। लगातार बेल के पत्ते शिवलिंग पर गिरने से भगवान शिव प्रसन्न हुए और अचानक डाकू के सामने प्रकट हो गए और डाकू को वरदान माँगने को कहा। उस दिन से बिल्व–पत्र का महत्ता और बढ़ गया।

सावन सोमवार का महत्त्व : श्रावण मास के प्रत्येक सोमवार को शिव के निमित्त व्रत किए जाते हैं। इस मास में शिव जी की पूजा का विशेष विधान हैं। कुछ भक्त तो पूरे मास ही भगवान शिव की पूजा–आराधना और व्रत करते हैं। अधिकांश व्यक्ति केवल श्रावण मास में पड़ने वाले सोमवार का ही व्रत करते हैं। श्रावण मास के सोमवारों में शिव के व्रतों, पूजा और शिव जी की आरती का विशेष महत्त्व है। शिव के ये व्रत शुभदायी और फलदायी होते हैं। इन व्रतों को करने वाले सभी भक्तों से भगवान शिव बहुत प्रसन्न होते हैं। यह व्रत भगवान शिव की प्रसन्नता के लिए किये जाते हैं। व्रत में भगवान शिव का पूजन करके एक समय ही भोजन किया जाता है। व्रत में भगवान शिव और माता पार्वती का ध्यान कर 'शिव पंचाक्षर मन्त्र' का जप करते हुए पूजन करना चाहिए।

सावन के महीने में सोमवार महत्वपूर्ण होता है। सोमवार का अंक 2 होता है, जो चन्द्रमा का प्रतिनिधित्व करता है। चन्द्रमा मन का संकेतक है और वह भगवान शिव के मस्तक पर विराजमान है। 'चंद्रमा मनसो जातः' यानी 'चंद्रमा मन का मालिक है' और उसके नियंत्रण और नियमण में उसका अहम योगदान है। यानी भगवान शंकर मस्तक पर चंद्रमा को नियंत्रित कर उक्त साधक या भक्त के मन को एकाग्रचित कर उसे अविद्या रूपी माया के मोहपाश से मुक्त कर देते हैं। भगवान शंकर की कृपा से भक्त त्रिगुणातीत भाव को प्राप्त करता है और यही उसके जन्म–मरण से मुक्ति का मुख्य आधार सिद्ध होता है।

काँवर : ऐसी मान्यता है कि भारत की पवित्र नदियों के जल से अभिषेक किए जाने से शिव प्रसन्न होकर भक्तों की मनोकामना पूरी करते हैं। 'काँवर' संस्कृत भाषा के शब्द 'कांवारथी' से बना है। यह एक प्रकार की बहंगी है, जो बाँस की फट्टी से बनाई जाती है। 'काँवर' तब बनती है, जब फूल–माला, घंटी और घुंघरू से सजे दोनों किनारों पर वैदिक अनुष्ठान के साथ गंगाजल का भार पिटा. रियों में रखा जाता है। धूप–दीप की खुशबू, मुख में 'बोल बम' का नारा, मन में 'बाबा एक सहारा।' माना जाता है कि पहला 'काँवरिया' रावण था। श्रीराम ने भी भगवान शिव को कांवर चढ़ाई थी।

हरियाली तीज : सावन का महीना प्रेम और उत्साह का महीना माना जाता है। इस महीने में नई-नवेली दुल्हन अपने मायके जाकर झूला झूलती हैं और सखियों से अपने पिया और उनके प्रेम की बातें करती है। प्रेम के धागे को मजबूत करने के लिए इस महीने में कई त्योहार मनाये जाते हैं। इन्हीं में से एक त्योहार है– 'हरियाली तीज'। यह त्योहार हर साल श्रावण माह में शुक्ल पक्ष की तृतीया को मनाया जाता है। इस त्योहार के विषय में मान्यता है कि माता पार्वती ने भगवान शिव को पाने के लिए तपस्या की थी।

इससे प्रसन्न होकर शिव ने 'हरियाली तीज' के दिन ही पार्वती को पत्नी के रूप में स्वीकार किया था। इस त्योहार के विषय में यह मान्यता भी है कि इससे सुहाग की उम्र लंबी होती है।

कुंवारी कन्याओं को इस व्रत से मनचाहा जीवन साथी मिलता है। हरियाली तीज में हरी चूड़ियां, हरा वस्त्र और मेंहदी का विशेष महत्व है। मेंहदी सुहाग का प्रतीक चिन्ह माना जाता है। इसलिए महिलाएं सुहाग पर्व में मेंहदी जरूर लगाती हैं। इसकी शीतल तासीर प्रेम और उमंग को संतुलन प्रदान करने का भी काम करती है। माना जाता है कि मेंहदी बुरी भावना को नियंत्रित करती है। हरियाली तीज का नियम है कि क्रोध को मन में नहीं आने दें। मेंहदी का औषधीय गुण इसमें महिलाओं की मदद करता है। सावन में पड़ने वाली फुहारों से प्रकृति में हरियाली छा जाती है। सुहागन स्त्रियां प्रकृति की इसी हरियाली को अपने ऊपर समेट लेती हैं। इस मौके पर नई-नवेली दुल्हन को सास उपहार भेजकर आशीर्वाद देती है। कुल मिलाकर इस त्योहार का आशय यह है कि सावन की फुहारों की तरह सुहागनें प्रेम की फुहारों से अपने परिवार को खुशहाली प्रदान करेंगी और वंश को आगे बढ़ाएँगी।

वर्षा का मौसम : सावन के महीने में सबसे अधिक बारिश होती है, जो शिव के गर्म शरीर को ठंडक प्रदान करती है। भगवान शंकर ने स्वयं सनतकुमारों को सावन महीने की महिमा बताई है कि मेरे तीनों नेत्रों में सूर्य दाहिने, बांये चन्द्रमा और अग्नि मध्य नेत्र है। जब सूर्य कर्क राशि में गोचर करता है, तब सावन महीने की शुरुआत होती है। सूर्य गर्म है, जो ऊष्मा देता है, जबकि चंद्रमा ठंडा है, जो शीतलता प्रदान करता है। इसलिए सूर्य के कर्क राशि में आने से झमाझम बारिस होती है, जिससे लोक कल्याण के लिए विष को पीने वाले भोलेनाथ को ठंडक व सुकून मिलता है। इसलिए शिव का सावन से इतना गहरा लगाव है।

सावन और साधना : सावन और साधना के बीच चंचल और अति चलायमान मन की एकाग्रता एक अहम कड़ी है, जिसके बिना परम तत्व की प्राप्ति असंभव है। साधक की साधना जब शुरू होती है, तब मन एक विकराल बाधा बनकर खड़ा हो जाता है। उसे नियंत्रित करना सहज नहीं होता। लिहाजा मन को ही साधने में साधक को लंबा और धैर्य का सफर तय करना होता है। इसलिए कहा गया है कि मन ही मोक्ष और बंधन का कारण है। अर्थात मन से ही मुक्ति है और मन ही बंधन का कारण है। भगवान शंकर ने मस्तक में ही चंद्रमा को दृढ़ कर रखा है, इसीलिए साधक की साधना बिना किसी बाधा के पूर्ण होती है।

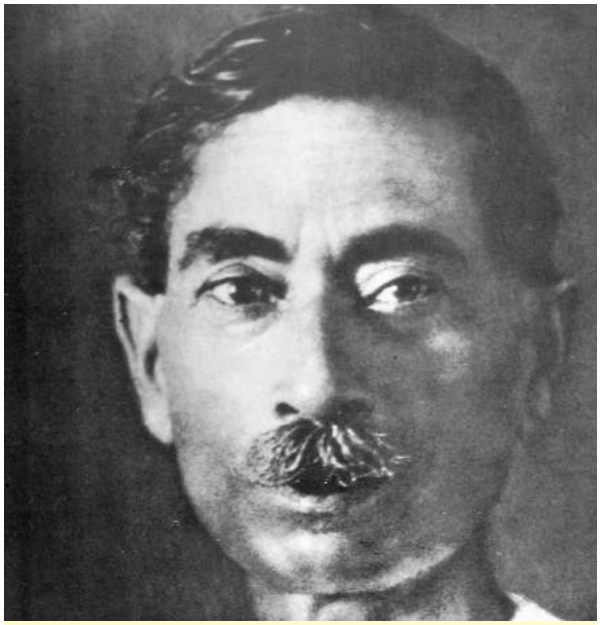

मुंशी प्रेमचंद

श्रीमती शोभा रानी तिवारी
इंदौर, मध्य प्रदेश

धन्य है यह धरती जहां, मुंशी जी ने जन्म लिया,
धन्य है वह मां जिसने, महापुरुष को जन्म दिया,
हिन्दी का हिन्दी से पहचान करा दिया,
विकास कर हिन्दी का नया स्वरूप दे दिया,
हर क्षेत्र में अग्रसर, बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे,
धन से गरीब लेकिन, शब्दों से अमीर थे,
कलम कभी बिकी नहीं, किसी के आगे झुकी नहीं,
सदा सत्य लिखते रहे, एक पल को रुकी नहीं,
सभी विधाओं में लिखा, नाटक कहानी उपन्यास लिखा,
कविताओं में मन के भाव लिख दिया,
चुनौतियों को लक्ष्य बनाकर लिखते रहे,
लोगों में आत्मविश्वास जगाते रहे,
टूटे हुए मनोबल को सहारा देकर,
औरों की प्रेरणा बनते रहे,
अपनी लेखनी से उड़ान भरी, हौसला बुलंद मिला,
विचारों से लेखनी को संबल मिला ,
प्रेमचंद जी ने जो लिखा, कोई लिख नहीं सकता,
आने वाली पीढी को विरासत कोई दे नहीं सकता,
शब्दों के जादूगर, लेखक में सम्राट थे,
साधारण दिखते थे, विचारों में विराट थे।

गौ माता अन्नपूर्णा, जीवन का आधार

पूनम माटिया रूस्तगी
स्वतंत्र लेखन
दिल्ली

माँ–सम सुत को पालती, ऋषि–कृषक उद्धार।
गौ माता अन्नपूर्णा, जीवन का आधार।।

सूरज की है प्रतिनिधि, वसुओं को दे प्यार।
आदित्यों की बहना है, शिव भी नन्दी सवार।।
मन–वांछित फलदायिनी, धरा पे है उपकार।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

भृगु ने द्विज को दान दिया, कामधेनु है नाम।
विष्णु किये गोपाला होकर, गौसेवा के काम।।
गौसेवा तन–मन से हो, हो वैतरणी पार।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

मलशोधक, अणुरोधक गोबर, है कमला का वास ।
गौमूत्र दे आरोग्य, धनवंतरी करें निवास ।।
ब्रह्मा विराजे कूबड़ में, गौ–स्पर्श है देव–द्वार ।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

चन्द्रकिरण अवशोषित करती, स्वर्ण–तत्व दे रोग–निदान।
कर ग्रहण तारों की किरणें, ऊर्जित करती वर्तमान ।।
गौ–घी से यदि हो हवन, हो प्राण–वायु संचार।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

घास–फूस खाकर भी माता, मधुमय दूध का देती दान।
कण–कण रक्त का पोषित कर हमको करती है बलवान।।
शुचि–संवेदन, शील–स्त्रोत, दुग्ध ज्यों अमृत की धार।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

हरि अनंत, हरि कथा अनंता, सो गौरस–व्याख्यान ।
करते–करते न थकें फिर भी हम अपमान।।
एक दृष्टि डालें अगर, मिल जाता है सार ।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

वध निर्दयी कुछ करते जाते, कटती जाती गाय।
कामधेनु है कहलाती , फिर भी बच न पाय।।
सूफी–संत, सयाने भक्तों, की सुनते नहीं गुहार।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

गौवंश अपना विशिष्ट, पश्चिम टिक न पाय।
फिर भी काहे गऊ अपनी, उपेक्षित–अनाथ रह जाय।।
दुर्दिन कब तक झेले अब, चहुँ ओर अँधियार।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

आर्तनाद न सुनता कोई, स्वार्थ सदा ललचाय।
जिंदा में ही फँसा के काँटा, खाल रहे नुचवाय।।
वैदिक संस्कृति की प्रतीक, अब कहाँ गए संस्कार?
गौ माता अन्नपूर्णा.....

भटके गली–गली ये मारी, घर–घर दुत्कारी जाय।
घुट–घुट जाएँ साँसे इसकी, पन्नी–प्लास्टिक खाय।।
ऐंठन लगे उदर जब इसका, कहाँ मिले उपचार ।।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

टेम्पों में रेवड़–सी भरकर भेजी, छोड़ी जाए।
साफ–सफाई इन्हें है प्यारी, गंद तनिक न सुहाय ।।
भव–पालक की प्यारी गैय्या कलियुग में लाचार ।
गौ माता अन्नपूर्णा.....

अंग्रेजों की नीति को, अब तक समझ न पाय।
अर्थतंत्र की रीढ़ को, जाते क्यों चटकाय।।
अब तो जागो भारतवासी, गैय्या रही पुकार।
गौ माता अन्नपूर्णा, जीवन का आधार

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

श्री कृष्ण की लीलाओं का रहय और उसकी प्रासंगिकता

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

जन्माष्टमी अर्थात् लीलाधारी श्री कृष्ण का अपने भक्तों के लिए लीला–विस्तार के निमित पृथ्वी पर अवतरण का दिन। अवतारवाद सगुण भक्ति का मेरुदण्ड है। प्रभु निर्गुण होते हुए भी सगुण हैं। सूक्ष्म होते हुए भी महान् हैं। निकट होते हुए भी दूर हैं। एकरस होते हुए भी विविध सृष्टियों के रचयिता हैं। ऐसा कथन वेदों में कई स्थानों पर आता है। विश्व में जो कुछ भी दृष्टिगोचर होता है, वह सब हरिलीला का ही प्रसार–विस्तार है। श्री कृष्ण के सभी अवतारी कृत्य एक ओर तो लीला–पक्ष की ओर भक्तों का रंजन करते हैं, दूसरी ओर उन्हें महान् संदेश भी देते हैं। कृष्ण आज भी जनमानस के प्रेरक हैं और उनकी हर लीला जीवन को अनुप्राणित करती है। **पूतनावध, शकटभंजन, तृणावर्तउद्धार, माखनचोरी, गोवर्धन–धारण, कालिय–मर्दन, दावानल–पान एवं महारास** आदि कितनी लीलाएँ हैं जिनसे सभी भली–भांति परिचित हैं। इन सभी कथाओं का अपना एक प्रतीकात्मक अर्थ है। आध्यात्मिक अर्थ है। कृष्ण की बाल्य एवं किशोर काल की सभी लीलाएँ आज भी प्रासंगिक एवं सटीक हैं। ये लीलाएँ जितनी महती, ऐश्वर्यमयी और अचरजमयी हैं उतनी ही ललित एवं सारगर्भित भी। कृष्ण की हर लीला सोद्देश्य है। यहाँ सभी लीलाओं के रहस्यपूर्ण अर्थ की व्यंजना करना संभव नहीं है। इनमें कुछ लीलाओं को ही समझने का प्रयास करते हैं।

आधुनिक युग जहाँ भौतिक सुख–सुविधाओं का युग है, साथ ही समस्याओं और तनावों से घिरे जीवन का भी प्रतिनिधित्व करता है। समस्याओं से डरना या भागना किसी भी समस्या का हल नहीं है। यह समझाया है हमें श्री कृष्ण ने दावानल–पान की लीला द्वारा। एक बार ब्रज के समीपस्थ वन में आग लगी। देखते–देखते गोकुल, ब्रज, वृन्दावन सभी स्थानों की वन–राशि, वनस्पतियाँ और हरे–भरे वृक्ष उसकी दाहक ज्वाला में झुलसने लगे। दावाग्नि ब्रज वासियों के समीप तक आ गई उसके विकराल रूप को देखकर ब्रज के नर–नारी व्याकुल हो उठे। इस विभीषिका से रक्षा–हेतु वे भगवान को पुकारने लगे। श्री कृष्ण ने कहा –''धैर्य धारण कर लो, भयभीत मत हो और आँखे बंद कर लो।'' इतना कहते ही दावानल कृष्ण के मुख में समा गया। कृष्ण ने उसका पान कर लिया दावानल शांत हो गया।

इस लीला से जो संदेश ध्वनित होता है, वह यह कि किसी भी मनुष्य या समाज का जीवन किसी भी समय समस्याओं की आग से घिर सकता है। अतः उसके लिए तैयार रहो। धैर्य बनाए रखो। वक्त के साथ–साथ विभीषिका शांत हो जाती है। जिस तरह से दुख आता है उसी तरह से वह चला भी जाता है। ब्रजवासियों को आँखे बंद करने का आदेश देना बहुत गहरा अर्थ रखता है। श्री कृष्ण अपने ऐश्वर्य रूप को उनके सामने प्रकट करना नहीं चाहते

थे। दूसरी व्यंजना यह भी है कि जीवों का कल्याण जब भी करो तो दूसरे को उसका आभास तक न हो। आज मनुष्य स्वार्थी हो गया है वह येन–केन–प्रकारेण केवल अपने लिए जीता है। केवल अपने को ही समस्या के घेरे से निकालता है। लेकिन यहाँ श्री कृष्ण ने महापुरुष के लक्षण बताए हैं। महापुरुष अपने आस–पास समस्या या दुःख से घिरे हर व्यक्ति को उबारता है। वह स्वयं झेलता है लेकिन समाज को राहत देता है। जैसे शिव ने विषपान कर सबका कल्याण किया, वैसे ही दावाग्नि–पान करके समस्त ब्रजवासियों की रक्षा करके श्री कृष्ण ने समर्थ व्यक्ति की सामर्थ्य के सदुपयोग का संदेश दिया है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण लीला है गोवर्धनपूजा। ब्रजवासी इन्द्र की पूजा करते हैं। श्री कृष्ण ने इन्द्रयज्ञ का निवारण कर इस परम्परा को तोड़ा। गोवर्धन की पूजा करने के लिए उन्होंने समस्त ब्रजवासियों का आह्वान किया। गोवर्धन प्रतीक है आजीविका का। श्रीकृष्ण का संदेश है कि प्रत्येक मनुष्य को चाहिए अपनी आजीविका को प्यार करें, उसकी पूजा करें, जिसके द्वारा मनुष्य की आजीविका सुगमता से चलती है, वही उसका इष्टदेव होता है। आगे चलकर यही विचार कबीर के भी थे। बाह्याडम्बरों एवं कर्मकांड का खुलकर विरोध करने वाले कबीरदास ने मूर्ति में भगवान मानने वालों की खिल्ली उड़ाई है, साथ ही इस बात पर ज़ोर दिया कि हमें उस चक्की की पूजा करनी चाहिए जिसका पीसा आटा सारा संसार खाता है। अर्थात् जो हमें रोटी देता है वही हमारा इष्ट है, वही पूजनीय है। कबीर के शब्दों में :–

''पत्थर पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूँ पहाड़।
ताते यह चाकी भली, पीस खाए संसार।।

गोवर्धान–पूजा से इन्द्र अत्यंत कुपित हो जाते हैं। इन्द्र के द्वारा सात दिन तक निरन्तर आँधी–पानी के तूफ़ान से ब्रजवासियों को पीड़ित करना और श्री कृष्ण का सभी गोप–ग्वालों के साथ मिलकर गोवर्धन–धारण करना भी महत्त्वपूर्ण संदेश व्यंजित करता है कि भयंकर से भयंकर स्थिति में भी धीरज बनाए रखो। किसी भी समस्या का चाहे वह प्राकृतिक प्रकोप भी क्यों न हो मिलकर मुकाबला किया जा सकता है। यदि सभी एकजुट हो जाएँ तो मनुष्य प्रकृति पर भी विजय पा सकता है। मनुष्य के दृढ़ मनोबल के आगे प्रकृति को भी झुकना पड़ता है। एक–एक गोप ने मिलकर अपनी–अपनी छड़ी के ज़ोर से गोवर्धान पर्वत को उठाया है। श्री कृष्ण का उंगली पर पर्वत उठाना अर्थात् जब मनुष्य स्वयं अपनी रक्षा करने के लिए उद्यत होता है तो भगवान भी उसके साथ है और विपदाएँ सब स्वतः विनष्ट हो जाती हैं। प्रकृति भी हार मान लेती है। इन्द्र ने पराजय स्वीकार कर ली। वर्षा थम गई। सारे ब्रजवासी प्रसन्न हो उठे।

एक और महत्त्वपूर्ण लीला है कालिय–मर्दन की। कालिया प्रतीक है देहध्यास का। इन्द्रियध्यास का। उसका एक–एक फन प्रतीक है एक–एक इन्द्रिय का। इसलिए इन्द्रियों को विषय–विष से पूर्ण कालियनाग का फन कहा गया है। जीव जब इन्द्रियों को ही आत्मा मान लेता है तो यमुना रूपी चित्त का जल विषैला हो जाता है। जब हमारा चित्त इन्द्रियों के विषयों में आसक्त हो जाता है, तो वह कलुषित हो जाता है। और मन या हृदय का यह कालुष्य आस–पास पूरे समाज को कलुषित कर देता है। उसकी विषैली गंध पूरा वातावरण विषाक्त बना देती है। प्राणवायु तक दूषित हो उठती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम स्वयं को भौतिकतावाद की ओर से थोड़ा हटाएँ। आज की उपभोगवाद की प्रवृत्ति ने पूरे समाज को स्वार्थ के विष से ज़हरीला बना दिया है। कालिय–मर्दन की लीला यही संदेश देती है कि इन्द्रियों को उनके विषयों की ओर जाने की खुली छूट ने दें तभी यमुना रूपी हृदय स्वच्छ और निर्मल होगा। उस निर्मल हृदय द्वारा ईश्वर की प्राप्ति सहज ही हो जाती है। तुलसीदास के शब्दों में 'निर्मल मन जन सो मोहि पावा।' वाली स्थिति बनने में देर नहीं लगती।

इसी प्रकार अन्य लीलाएँ भी प्रासंगिक है। वास्तव में हरिल. ीला आत्मशक्ति की विभिन्न क्रीड़ाओं का चित्राण है। राधा, कृष्ण, गोपी आदि सब अन्तःशक्तियों के प्रतीक हैं। हरिलीला में रास को प्रमुख स्थान प्राप्त है। रास एक प्रकार का मंडलाकार नृत्य होता है जिसके केन्द्र में राधा और कृष्ण हैं। राधा और कृष्ण दो नहीं प्रतीत होते। चारों ओर गोपियाँ हैं। नृत्य की गतिविधि इस प्रकार होती है कि प्रत्येक गोपी, कृष्ण को अपने ही समीप अनुभव करती है। नीलवर्ण कृष्ण और स्वर्णवर्ण की गोपियाँ मेघ और दामिनी प्रतीत होती हैं। स्थूल दृष्टि से देखने पर यह शुद्ध मधुर भाव या लौकिक कामरस कहा जा सकता है जबकि यह दिव्य है। परमोज्ज्वल प्रेम भाव है। गोपियाँ जीवात्मा का प्रतीक हैं। कृष्ण ब्रह्म हैं। जीवात्मा में परमात्मा और परमात्मा में जीवात्मा की व्याप्ति इसका लक्ष्यार्थ है।

श्री कृष्ण एक हैं, गोपियाँ अनेक। सोलह सहस्त्रा गोपियाँ। पर नृत्य की द्रुत गति द्वारा परमात्मा सबके समीप पहुँच जाता है। एक ही समय में वह सबको प्राप्त हो जाता है। इस लीला से स्पष्ट किया है कि परमात्मा सर्वव्यापक हैं। तुलसीदास ने भी 'व्यापक बिस्व रूप भगवाना। प्रेम ते प्रकट होइ मैं जाना।' कहकर इसी सत्य को उद्घाटित किया है। गोपियों ने भी प्रेम से श्री कृष्ण को प्रकट किया है। उसे पाया है। भगवान प्रेम के वशीभूत हैं। अब आगे देखिए नृत्य चलता रहा। अचानक कृष्ण अर्न्तध्यान हो गए। रासमग्न गोपियों को इस बात का अभिमान हो गया कि भगवान के साथ रमण करने के कारण वे श्रेष्ठ हैं। कृष्ण उनका गर्व–भंग करने के लिए वहाँ से अचानक लुप्त हो गए। गोपियाँ कृष्ण–वियोग से छटपटाने लगीं। इससे यही संदेश ध्वनित होता है कि अभिमान मिलन का बाधक है। जीव जब– जब अभिमान करता है, परमात्मा उससे दूर चले जाते हैं क्योंकि **'प्रेमगली अति साँकरी तामे दो न समाये'**

रासनृत्य में बाईं और राधा रहती हैं, वह भी मान करती हैं। कृष्ण वहाँ से भी अन्तर्ध्यान हो जाते हैं। राधा रोती रहती हैं। पश्चाताप की अग्नि में जलकर जब राधा का मान नष्ट हो जाता है तो कृष्ण पुनः प्रकट हो जाते हैं। पुनः रास आरंभ हो जाती है। कृष्ण गोपियों और राधा को कहते हैं 'मैं तो तुम्हारे ही पास था' यानी ईश्वर आपके पास है पर अहंकार से हम उसे खो देते हैं। अहंकार के नष्ट होते ही पार्थक्य के समस्त बंधन छिन्न–भिन्न हो जाते हैं और सारी मनोवृत्तियाँ आत्मा में लीन हो जाती हैं। रास–लीला का अर्थ है परमात्मा का एक–एक आत्मा के साथ तद्रूप हो जाना। यही भारतीय संस्कृति का चरम लक्षण है।

इस आध्यात्मिक अर्थ के अतिरिक्त यदि लौकिक अर्थ में भी इसे देखें तो भी बहुत सुन्दर अर्थ गर्भित है। आज हमारे सम्बंधों के बीच में जो टूटन और बिखराव दिखाई देता है, उस सब का कारण हमारी श्रेष्ठता का अहंकार ही है। दंभ रिश्तों को जोड़ता नहीं, तोड़ता है। स्त्री–पुरूष के सम्बंध हों चाहे अन्य सम्बंध सभी में अहं बाधक है। वह हमारे वियोग का कारण है। अतः यदि हम सम्बंधों में स्थायित्व चाहते हैं तो हमें मिथ्या दम्भ छोड़ना होगा। स्वयं को श्रेष्ठ समझने का सूक्ष्म गर्व कभी भी हृदयों को मिलने नहीं देता। इस तरह लौकिक अर्थ में भी लीला अत्यंत महत्त्पूर्ण है।

इस प्रकार कृष्ण लीलाओं में वह समस्त सामग्री मूल रूप में विद्यमान है, जिसको आधार बनाकर सुन्दर–सुखद एवं मंगलमय जीवन के भव्य भवन का निर्माण किया जा सकता है। इस भवन में आनन्द और आह्लाद के रंगों के साथ–साथ जीने की ऐसी सुन्दर कला है, जिससे हमारा जीवन आलोकित हो उठता है। भगवान अपनी अद्भुत लीला के द्वारा अपने भक्तों को न केवल परमानंद प्रदान करते हैं, वरन् उनके कल्याण का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं।

स्फटिक शिवलिंग के अभिषेक का महत्व

देश का पहला स्फटिक शिवलिंग रामेश्वरम में, दूसरा स्फटिक शिवलिंग जम्मू के रघुनाथ मंदिर में, तीसरा स्फटिक शिवलिंग गया शहर के रामशिला पहाड़ की तलहटी में और चौथा स्फटिक शिवलिंग मध्य प्रदेश के उज्जैन महाकाल वन में भैरवगढ़ रोड पर मां बगलामुखी धाम में विराजित है।

स्फटिक शिवलिंग के अभिषेक का अध्यात्म के साथ–साथ वैज्ञानिक स्तर पर भी विशेष महत्व है। उज्जैन के ऐतिहासिक, पौराणिक महत्व के इस महाकाल वन में स्थित 251 किलोग्राम वजन एवं 3 फीट ऊंचाई के स्थापित इस अद्भुत स्फटिक शिवलिंग की पूजा– अर्चना– अभिषेक एवं ध्यान के द्वारा श्रद्धालुओं को प्राप्त होती है, असीम शांति और आश्चर्यजनक आध्यात्मिक अनुभूतियां।

श्रावण माह में भगवान शिव के रुद्राभिषेक का विशेष महत्व होता है। भोलेनाथ को प्रसन्न करने के लिए स्फटिक शिवलिंग का विधि– विधान से जल, दूध, दही, शुद्ध घी, शहद, शक्कर, गंगाजल तथा गन्ने के रस आदि से अभिषेक किया जाता है। अभिषेक कराने के पश्चात बेलपत्र, शमी पत्र, कुशा तथा दूध आदि भोलेनाथ शिव को अर्पित करते हैं। अंत में भांग धतूरा तथा श्रीफल भोलेनाथ को भोग के रूप में चढ़ाया जाता है। इस पावन स्थल पर विधिवत की गई पूजा–अर्चना–अभिषेक से श्रद्धालुओं को आश्चर्यजनक अनुभूति की प्राप्ति होती है। श्रावणमास में स्फटिक शिवलिंग का अभिषेक करने से भक्तों को आश्चर्यजनक लाभ प्राप्त होता है, जैसे –स्फटिक शिवलिंग का जल से अभिषेक करने पर वर्षा होती है। सहस्रनाम मंत्रों का उच्चारण करते हुए शुद्ध घी की धारा से अभिषेक करने पर वंश का विस्तार होता है। दुग्धाभिषेक करने से प्रमेह रोग की शांति होती है। सरसों के तेल से अभिषेक करने पर शत्रु पराजित होते हैं। इत्र मिश्रित जल से अभिषेक करने से बीमारी नष्ट होती है। भवन– वाहन की प्राप्ति के लिए दही से अभिषेक किया जाता है। धन–वृद्धि के लिए शहद एवं घी से अभिषेक किया जाता है। पुत्र प्राप्ति के लिए गौदुग्ध से अभिषेक करना चाहिए। असाध्य रोगों को शांत करने के लिए कुशोदक से स्फटिक शिवलिंग का अभिषेक करना चाहिए। कामना पूर्ति के लिए दूध, दही, घृत, शहद एवं शक्कर से अलग अलग अथवा सबको मिलाकर पंचामृत से भी अभिषेक करने का विधान है। इस प्रकार विविध द्रव्यों से स्फटिक शिवलिंग का विधिवत अभिषेक करने पर अभीष्ट कामना की पूर्ति होती है। इसमें किसी प्रकार का कोई संदेह नहीं है की नियमित रूप से इस अलौकिक स्फटिक शिवलिंग का अभिषेक बहुत ही उत्तम फल श्रद्धालुओं को प्राप्त होता है, नियमित पूजा, अर्चना, अभिषेक, ध्यान से दरिद्रता, शोक, रोग, समाप्त हो जाते हैं और लक्ष्मी अपने पूर्ण स्वरूप में विराजित होती है। ■

नाथ योगी गोगा पीर जी

योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान सम्पादक–अध्यात्म संदेश

ब्रिग्स ने 'गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज' में लिखा है कि लोग दिवाली की रात को श्रद्धापूर्वक गोगा की कथा सुनते हैं, उनका विश्वास है कि इससे घर में सांप नहीं आते।

महायोगी गोरखनाथजी के कृपापात्र, नाथयोग में दीक्षित नाथयोगी गोगा का जीवनवृत्तान्त विक्रमीय ग्यारहवीं शताब्दी से विक्रमीय चौदहवीं शताब्दी तक–300 साल के मध्य की जनश्रुतियों, लोक–कथाओं से समृद्ध मध्यकालीन भारतीय इतिहास की बलिदान और त्याग की वीरोचित गाथा है, जिससे पता चलता है कि देशकालातीत शिवगोरक्ष महायोगी गोरखनाथ ने अपने अमृतसिद्ध योगदेह में अभिव्यक्त होकर नाथयोग की श्रीवृद्धि में महनीय योगदान दिया। गोगा राजस्थान के ही वीरात्मा नाथयोगी नहीं, समस्त भारत के महान् चमत्कारिक योगी के रूप में भी प्रसिद्ध है और अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए देह से घोड़े पर सवार होकर अदृश्य हो जाना उन्हें राजस्थानी जौहरव्रती प्रमाणित करता है, जोहरवीर के रूप में ही अपने अनुयायी योगी मुसलमानों के लिए जाहरपीर के रूप में भी वे सम्मानित है। वे हिन्दू और मुसलमान, दोनों के लिए नाथयोगी के रूप में अमित श्रद्धास्पद हैं। नान्दिया योगी, जो नन्दी बैल लेकर भिक्षाटन करते हैं, राजस्थान, पंजाब, मध्य प्रदेश आदि में गोरखनाथजी के शिष्य गोगा और हीर–रांझा की जीवन– गाथायें गाते चलते है। इसी तरह योगिराज भर्तृहरि के अनुयायी योगी योगिराज गोपीचन्द, भर्तृहरि (भरथरी) पूरन भगत (चौरंगीनाथ), रसालू, हीर और रांझा तथा गोगा आदि नाथसम्प्रदाय के सिद्धों और महात्माओं के गीत सारंगी आदि अनेक वाद्ययन्त्रों पर गा–गाकर लोकरंजन करते हैं। इसी तरह अनेक गोरखपंथी योगी गोगा के जीवन वृत्तान्त के गीत गाते हुए उनके प्रति अगाध हार्दिक श्रद्धा प्रकट कर गोरखनाथजी के चरणदेश में उनके समर्पित जीवन की स्मृति से लोकमानस को समृद्ध करते रहते हैं।

बागड़– परिसर– राजस्थान प्रदेश के बीकानेर के अन्तर्गत एक इतिहास प्रसिद्ध स्थान है। गोगा के पिता राजा जेबर इसी बागड़ क्षेत्र के दवरेवा (शहर दढेरा शीशमढ़ी) के अधिपति थे। गोगा की योगसाधना और महायोगी गोरखनाथ जी की योगसिद्धि से इस बागड़ क्षेत्र का कण–कण अनुप्राणित है। गोगा ने अपने जीवन में त्याग– बलिदान, योगसाधना, युद्धस्थल में स्वधर्म और स्वदेश तथा स्वत्वरक्षा के लिए पराक्रम आदि जो कुछ भी चरितार्थ किया, उसके मूल में महायोगी गोरखनाथ का उनके प्रति स्नेह और अनुग्रह ही परिलक्षित है। गोगा को सर्प का अभिमन्त्रण और अभिकीलन तथा उन पर स्वामित्व– वशीकारत्व की शक्ति गोरखनाथजी से ही मिली थी। गोगा ने सर्प के दंशन से अपने अनुयायियों और श्रद्धालुओं की रक्षा की। उनके आशीर्वाद से और नाम से प्रताप से असंख्य वन्ध्या स्त्रियों ने सन्तान प्राप्ति की। गोगा के जीवन– काल में यह निर्विवाद है कि भारत की उत्तरी– पश्चिमी सीमा के अनेक राज्य, नगर और ऐतिहासिक स्थान मुसलमानों के प्रारम्भिक आक्रमण से प्रभावित थे और इस दिशा में राजस्थान के विशाल भूमिभाग को मुसलमानों के आक्रमण से मुक्त रखने में गोगा की भूमिका महनीय थी। यहां तक कहा जाता है कि जिस समय फिरोजशाह तुगलक (1358–88ई०) दिल्ली का बादशाह था, गोगा युद्ध करते दिवंगत हुए थे। यद्यपि गोगा पृथ्वीराज के समकालीन थे और महमूद गजनवी और मुहम्मद गोरी के विरूद्ध उन्होंने युद्धभूमि में अपनी वीरता दिखायी थी, तथापि फिरोजशाह के समय में उनके नाम को युद्ध से जोड़ने की जनश्रुति इस बात का प्रमाण है कि उनकी वीरगाथा जनमानस में उस समय भी सुरक्षित थी। एक अनुश्रुति गोगा को महमूद गजनवी का समकालीन सिद्ध करती है कि महमूद गजनवी के विरोध में युद्ध करते

वे स्वर्गवासी हुए थे। उन्हें पृथ्वीराज चौहान का भी समकालीन कहा गया है। जनश्रुतियों की ऐतिहासिक छानबीन से इस बात की सम्भावना सुदृढ़ हो जाती है कि वे पृथ्वीराज के समकालीन थे और युद्ध-क्षेत्र में अपनी वीरता और पराक्रम तथा साहस का उन्होंने परिचय दिया था। कहा जाता है कि 1193 ई० में मुहम्मद गोरी से युद्ध करते वे मारे गये थे। इतिहासकार टाड का कथन है कि 1024 ई० में महमूद गजनवी से युद्ध करते गोगा ने प्राणत्याग किया था। सारी धारणाओं के मूल में यह स्पष्ट है कि उन्होंने प्रारम्भिक मुसलिम आक्रमण से स्वदेश, स्वधर्म की रक्षा करते हुए युद्ध- क्षेत्र में अपनी वीरता सार्थक की। गोगा का समग्र जीवन-चरित्र चमत्कारों और महायोगी गोरखनाथजी के अनुग्रह से रससिक्त है। उनकी उत्प. त्ति, जीवन-प्रगति, वीरता, योग- साधना और समाधि, सब-के सब योगपरक दिव्यता और सिद्धियों से ओतप्रोत है। जनश्रुति है कि गोगा चौहान क्षत्रिय थे और दिल्लीश्वर पृथ्वीराज के समय में विद्यमान थे। राजस्थान के बीकानेर के चूरूजन-पद में ददरबा (शहर दढ़ेरा शीशमेडी) के राजा उम्मर उनके पितामाह और जेबर उनके पिता थे। जेबर की पत्नी का नाम बाछल था, जो सिरसा के राजा कुंवर गणपाल की कन्या थी। बाछल की बहन आछल का भी विवाह गोगा के ही राजवंश में हुआ था। विवाह के बाद बाछल अधि ाक समय तक निस्सन्तान रही। जेबर राज्य के उत्तराधिकारी पुत्र के जन्म के लिए बहुत चिन्तित थे। एक समय महायोगी गोरखनाथ अपने चौदह सौ योगी शिष्यों के साथ बागड़ आये और उन्होंने जेबर के बाग में अपनी धूनी प्रज्वलित कर अलख जगाया। बाछल उनके दर्शन के लिए आयी और उनके अनुग्रह और धूनी की वभिूति से उसके गर्भ में गोगा ने प्रवेश किया। रानी बाछल की बहन काछल को भी गोरखनाथजी की विभूति से अरजन-सरजन नाम के दो पुत्र हुए। जब जेबर को पता चला कि वंध्या रानी बाछल गर्भवती है तो इस घटना को अपने वंश की प्रतिष्ठा में कलंक मानकर उन्होंने बाछल का बध करने के लिए म्यान से तलवार खीचना चाहा पर वह गोरखनाथजी की योगसिद्धि से म्यान के बाहर ही नहीं आयी। उन्होंने रानी को नैहर भेजने की योजना कार्यान्वित की। गोरखनाथजी ने काछल को हव्य प्रसाद रूप में गुग्गुल दिया था। रानी ने स्वयं तो इसे खाया ही, लीली घोड़ी को भी खिलाया था। इसके परिणामस्वरूप इस प्रसाद से उत्पन्न होने वाले बालक को गोगा कहा गया तथा बछड़े को लीला घोड़ा नाम दिया गया, जिस पर बड़े होने पर गोगा सवारी करते थे। जेबर ने बैलगाड़ी पर रानी को बिठाकर सिरसा भेजा, रास्ते में दैवी विधान से सांप (तक्षक) ने एक बैल को काट लिया। गर्भगत शिशु गोगा के योग-प्रभाव से बैल को प्राणदान मिला और तक्षक वासुकि नाग की सेवा में चला गया, वह गर्भस्थ शिशु के प्रभाव से उसके वश में हो गया। उसने आजीवन सेवाप्रवृत्त रहने का वचन दिया। गोरखनाथजी ने राजा जेबर को स्वप्न में आदेश दिया था कि बाछल को नैहर से शीघ्र बुलाना चाहिये, यही कारण है कि अपने ही राजप्रसाद में माता ने पुत्ररत्न को जन्म देने का गौरव प्राप्त किया था।

गोरखनाथजी के अनुग्रह से भाद्र कृष्ण नवमी को अपने पिता के ही राजप्रासाद में गोगा का जन्म हुआ। उस समय घनिष्टा नक्षत्र था। ऐसी जनश्रुति है कि शिवगोरक्ष महायोगी गोरखनाथजी ने ब्रह्मा से बाछल की भाग्यलिपि बदल देने की प्रार्थना की थी, क्योंकि उसके भाग्य में पुत्र-जन्म का सुख नहीं था। ब्रह्मा ने उसका भाग्य परिवर्तन किया और गोरखनाथजी की धूनी की विभूति ही गोगा के रूप में अवतरित हुई। ज्यों-ज्यों वे वयस्क होते गये, उनकी शिक्षा-दीक्षा आदि की बड़ी संतोषजनक व्यवस्था की गयी पर उनका मन आध्यात्मिक चिन्तन, घुड़सवारी, शिकार और अस्त्र-शस्त्र की विद्या सीखने में विशेष रूचि लेता था। वे अपने पराक्रम, मनोबल और यौगिक चमत्कारों के लिए धीर-धीरे दूर-दूर तक विख्यात हो गये।

गोगा का विवाह आसाम प्रदेश के कामरू (कामरूप) के सिंझागढ़ के राजा सिंझा की कन्या सिरियल से सम्पन्न हुआ था। इस विवाह में भी गोगा की योगशक्ति, मनोबल, आत्मनियन्त्रण और उनके प्रति गोरखनाथजी के स्नेह तथा अनुग्रह का परिचय मिलता है। स्वप्न में गोगा ने सिंझागढ़ देखा और राज कन्या सिरियल का सौन्दर्य देखकर सिंझागढ़ के लिए प्रस्थान किया। सिरियल और गोगा दोनों ने परिणयसूत्र में निबद्ध होने का एक दूसरे को वचन दिया। सिंझागढ़ के राजा ने आमेर के राजपुत्र को सिरियल के वर के रूप में वरीयता दी, टीका भेजा, पर सिरियल के संकेत से गोगा ही उसके वर के रूप में मनोनीत हुए। गोगा का साँपों पर अद्‌भुत प्रभाव था। वे सिरियल को विवाहित करने के लिये कामरू जा रहे थे। उन्हें पता चला कि सिरियल को सांप ने

काटा है। उन्होंने वनप्रान्त में बांसुरी में गोरखनाथजी ऐसे महायोगी गुरू का नाम उच्चारण करते हुए उसे निनादित किया। सांप उनकी वंशीध्वनि पर आनन्दमग्न होकर नृत्य करने लगे। गोरखनाथजी की योगशक्ति से गोगा तक्षक नाग सहित कामरू पहुंच गये और उनके यौगिक मन्त्र-प्रयोग तथा तक्षक की सहायता से सिरियल जीवित हो उठी। सिरियल और गोगा के विवाह में स्वयं महायोगी गोरखना. थजी उपस्थित थे। उन्होंने अपनी सिद्धिमयी झोली से आभरण, साड़ी, वस्त्र तथा कीमती आभूषण निकाल कर गोगा की पत्नी का अलंकरण किया। गोरखनाथजी ने गोगा के बारात में वाहन, रथ, हाथी-घोड़े और सेवकों को साथ लेकर परिणय सम्पन्न कराया था। विवाहोपरान्त गोगा का जीवन अधिक समय तक भोग-सेवन नहीं कर सका, वे तो योग और वैराग्य के पथ के पथिक थे। गो. रखनाथजी की उन पर अपार कृपा थी, इसलिए नाथयोग की साध ना-प्रक्रिया के अनुरूप उन्होंने अपने जीवन को ढालना आरम्भ किया। यद्यपि गोगा राजकार्य-संचालन तथा प्रजा पालन में उदासीन नहीं थे, तथापि योग की साधना और गोरखनाथजी की महिमा के चिन्तन में वे विशेष आसक्त थे। पिता जेबर के दिवंगत होने पर उन्हें गृहकलह का सामना करना पड़ा, उनके मौसेरे भाई अरजन-सरजन उनके विरोधी थे। दोनों के उकसाने पर दिल्ली के बादशाह ने बागड़ पर आक्रमण किया, पर गोगा ने बादशाह को परास्त किया। युद्ध से उनका मन खिन्न हो उठा, उन्होंने तपस्या और एकान्त-सेवन के लिए वन में निवास किया। एक दिन झाड़ी के रेतीले मैदान में घोड़े पर सवार होकर निकल पड़े और कहा जाता है कि पृथ्वी में समा गये। उस स्थल पर उनकी समाधि बनी है।

हिसार के दक्षिण-पश्चिम 300 कीलोमीटर की दूरी पर उनकी समाधि का संकेत ब्रिग्स ने अपने ग्रन्थ 'गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज' में किया है। गोगा और सिरियल, दोनों को ही नाथ योगियों और गोरखनाथजी के पंथ के अनुयायियों द्वारा सम्मानित और श्रद्धास्पद समझा जाता है। गोहाटी के निकट सिरियल का एक मन्दिर है योगिनी के रूप में, सिरियल की पूजा-अर्चना होती है। ब्रिग्स ने अपने ग्रन्थ 'गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज' में एक स्थल पर सिरियल के मन्दिर का उल्लेख किया है। राजस्थान के गंगानगर जनपद में गोगा मेड़ी में प्रतिवर्ष भादों कृष्ण नवमी को मेला लगता है। वहां गोरखनाथजी का भी मन्दिर है। मेला प्रायः एक माह तक चलता है, इसमें उत्तर प्रदेश, हरियाणा, गुजरात, पंजाब, बिहार, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र, जम्मू काश्मीर आदि अनेक प्रदेशों से बड़ी संख्या में श्रद्धालु आते हैं और नाथयोगी गोगा और महायोगी गोरखनाथ के चरणों में श्रद्धा समर्पित करते हैं। यात्री गोरखनाथजी के धूने और जाहरपीर गोगा के दर्शन से अपने आपको कृतार्थ करते है। उत्तर प्रदेश के बिजनौर, इटावा, रामपुर, सहारनपुर आदि जनपदों के अनेक स्थानों में तथा कानपुर, फर्रूख. ाबाद आदि के अनेक स्थलों पर तथा राजस्थान, पंजाब के चूरू, जनपद, पटियाला, आम्बाला आदि जनपदों में गोगाजी के सम्मान में मेले लगते है। इससे उनकी लोकप्रियता और गोरखनाथजी के प्रति अगाध जनश्रद्धा का पता लगाता है। बागड़ में जो गोगाजी की समाधिस्थली है, वहां गोगाजी घोड़े पर सवार के रूप में प्रतिमांकित दिखाये गये हैं। ब्रिग्स ने 'गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज' में लिखा है कि लोग दिवाली की रात को श्रद्धापूर्वक गोगा की कथा सुनते हैं, उनका विश्वास है कि इससे घर में सांप नहीं आते। यह बात सिद्ध करती है कि नाथयोगी गोगा को सर्पो को कुण्ठित करने और उन्हें वशीभूत रखने की शक्ति थी। गोगा के अनेक मन्दिरों-गोगा मेड़ियों के निकट ही गोरखनाथजी और भैरव के मन्दिर पाये जाते हैं। जोधपुर की प्राचीन राजधानी मन्दौर में 18 वीं शती ई० के शासक अभयसिंह के समय में एक ही शिलाखण्ड में सोलह राजपूत वीरों की प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं, जिनमें घोड़े पर सवार गोगा एक हैं। ब्रिग्स ने अपनी पुस्तक 'गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज' में इस तथ्य का प्रकाशन कर सिद्ध किया है कि राजस्थानी वीरों में गोगा को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। नाथयोगी गोगा की पवित्र वीरागाथा और योगसाधना चिरस्मरणीय हैं।

शुभ मुहूर्त के लिए चौघड़िया देखकर कार्य करें।

दिन का चौघड़िया			प्रातः 6 से सायं 6 बजे तक				चौघड़िया	रात का चौघड़िया			सायं 6 से प्रातः 6 बजे तक			
रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	समय	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	6 से 7.30 तक	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	7.30 से 9 तक	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	9 से 10.30 तक	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	10.30 से 12 तक	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12 से 1.30 तक	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	1.30 से 3 तक	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	3 से 4.30 तक	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	4.30 से 6 तक	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

शुभ मुहूर्त : अमृत, शुभ, लाभ, चर हैं। | अशुभ मुहूर्त : उद्वेग, काल, रोग हैं।

आस्था

मनमोहन कालरा

निदेशक
विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग
नई दिल्ली, भारत सरकार

बात उन दिनों की है, जब 31 अक्टूबर 1984 में इंदिरा गांधी की नृशंस हत्या के बाद दिल्ली सहित भारत के अन्य शहरों में दंगे भड़क उठे थे। मेरा एक सिख सहकर्मी अपने परिवार के साथ दिल्ली के यमुना विहार इलाके में रहता था। 1 नवम्बर 1984 को दंगाई हथियारों से लैस दिन में करीब 11 बजे यमुना विहार पहुंचे। उनके पास वोटर सूची थी। वे सरदार जी के घर पहुंचे। घर के बाहर बड़ा ताला लटक रहा था, जो कि पड़ोसियों ने सरदार जी की सुरक्षा के लिए लगा दिया था। सरदार जी दुर्गा मां के भी भक्त थे। उन्होंने अपनी कोठी के माथे पर मां दुर्गा की प्रतिमा लगाई हुई थी। दंगाइयों ने पड़ोसियों से पूछा कि 'सरदार जी कहां है?' पड़ोसियों ने बताया कि सरदार जी सेवानिवृत्त होने के बाद बहुत पहले ही पंजाब चले गये थे। अब यह मकान किसी ने खरीदा है। नये मालिक अभी यहां नहीं आए। हाँ इसलिए मकान पर ताला लगा हुआ है। दंगाइयों को विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने पड़ोसियों से कहा कि आप झूठ बोल रहे हैं। पड़ोसियों ने दंगाइयों को बताया कि देखिए कोठी के बाहर उपर माथे पर दुर्गा मां की प्रतिमा लगी है, यह मकान किसी सिख का कैसे हो सकता है? यह तो हिंदू का ही मकान है। दंगाई आश्वस्त होकर चुपचाप चले गए। सरदार जी और उनके परिवार की रक्षा मां दुर्गा ने की।

श्री गणेशाय नमः

बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता

सौम्या पाण्डेय 'मूर्ति'

जीवन के पथ पर अग्रसर रहने के लिए प्रत्येक मनुष्य को मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है, परन्तु मार्गदर्शन मिलने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण सही एवं सटीक मार्गदर्शन मिलना है जो कि उतना ही आवश्यक है, जिससे की मनुष्य के जीवन का दिशा निर्धारण हो सके। इसकी प्रामाणिकता इसी बात से सिद्ध होती है कि सदियों पूर्व 'गोस्वामी तुलसीदास जी' अपने सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ 'श्री राम चरित मानस' में इसका उल्लेख कर चुके हैं।

मानस के सर्वप्रसिद्ध कांड 'सुंदर कांड' में जब हनुमान जी सीता माता को ढूढ़ते हुए लंका पहुँचते हैं तो वहाँ उनकी भेंट विभीषण जी से होती है। विभीषण जी उस समय 'राम नाम' का पाठ कर रहे थे, जिसे सुनकर हनुमान जी अनुमान लगा लेते हैं कि राक्षसों के मध्य यहाँ किसी सात्विक व्यक्ति का वास है। तभी वो भी ब्राह्मण का वेश बदलकर राम नाम का उच्चारण करने लगते हैं।

जब दो भक्तों का आपस में मिलन होता है व एक दूसरे का परिचय प्राप्त होता है, तब विभीषण जी प्रफुल्लित हो जाते हैं। उसी समय भावावेश में वो यही कहते हैं कि 'बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता' अर्थात, संत का सानिध्य बिना हरि की कृपा के नहीं प्राप्त होता है। यहाँ हनुमान जी के साथ समागम की तुलना उन्होंने संत से मिलने से करी थी। यह सत्य भी था क्योंकि भरी राक्षसों की नगरी में एक ईश्वर भक्त से मिलना ही अपनेआप में विलक्षण था। यहाँ तो हनुमान जी साक्षात ग्यारहवें रुद्र थे, जो स्वयं आकर विभीषण जी से मिले थे। उनकी यह भेंट ही विभीषण जी के सन्मार्ग पर चलने व 'प्रभु राम' से मिलने का आधार बनी। इस प्रकार संत रूपी हनुमान जी का मिलना ही विभीषण जी के मार्गदर्शन का कारण बना।

यह प्रसंग मानस के अनुसार संत समागम के महत्त्व को दर्शाता है, परंतु यह आज भी उतना ही प्रासंगिक है क्योंकि जिस प्रकार नदी की भँवर को पार करने के लिए एक कुशल नाविक की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार जीवन रूपी भवसागर को पार करने के लिए संत के सानिध्य की आवश्यकता होती है।

वर्तमान समय में, संत से तात्पर्य सटीक मार्गदर्शन से है, जो हमें जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए आवश्यक है। वर्तमान समय में संत का मिलना घास में सुई ढूढ़ने के बराबर है, परन्तु विद्वान व्यक्ति के अनुभव व ज्ञान का मार्गदर्शन, मनुष्य के जीवन को सही दिशा में निरूपित कर सकता है, अतः व्यक्ति विशेष जो किसी भी मनुष्य को उसके जीवन निर्वहन के उचित मूल्यों से अवगत कराए व लक्ष्य प्राप्ति के लिये अग्रसर करे वही व्यक्ति वास्तव में संत है।

प्रत्येक व्यक्ति को दिशा निर्देश की आवश्यकता होती है। बिना किसी मार्गदर्शन के जीवन में आगे बढ़ना उतना सहज नहीं है जितना लगता है क्योंकि अनुभव वो पूँजी है जिसके प्रकाश से आलोकित मार्ग सरल, अकंटक व सुनियोजित हो जाता है, फिर चाहे वो मार्गदर्शन स्वयं के माता–पिता के रूप में हो, गुरु के रूप में, मित्र के रूप में अथवा सहयोगी के रूप में हो, निश्चय ही मनुष्य के पथ को प्रशस्त करता है । यहाँ यह कहना भी अनुचित नहीं होगा कि आज के समय में मार्गदर्शक मिलना भी संत मिलने के समान ही है, क्योंकि यही मार्गदर्शन मनुष्य व समाज के वैचारिक, मानसिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक मूल्यों की भी संरचना करता है ।

वर्तमान संदर्भ में संत को मार्गदर्शक के रूप में ही देखा जाना चाहिये क्योंकि वास्तव में संत कौन हैं ? तो मेरा मत है कि मार्गदर्शक, क्योंकि प्राचीन काल में धर्म, जीवन, दर्शन, अध्यात्म, शिक्षा के दायित्व को संतो ने ही तो संभाल रखा था। संत सम्पूर्ण समाज का मार्ग प्रशस्त करते थे। जब– जब धर्म की हानि हुई है व समाज में भटकाव की स्थिति आई है तब संत ही आगे आए हैं एवं समाज व मानव जाति का मार्ग दर्शन करते रहे हैं।

आदि शंकराचार्य जी इसका सर्वोत्तम उदाहरण हैं। जिस समय समाज में धार्मिक रूप से पूर्णतः बिखराव की स्थिति उत्पन्न हो गई थी, व समाज में धर्म–कर्म, नियम– पालन, आचार – विचार आदि को लेकर भ्रांति की स्थिति बनी हुई थी। तब मनुष्य को यह समझना कठिन था कि किस धर्म, किस मर्यादा का पालन करे। उस समय आदि गुरु शंकराचार्य जी महाराज ने श्रेष्ठ 'सनातन धर्म' की पुनर्स्थापना कर मानव जाति को मार्ग दिखाया व एकमात्र वे ही थे व उन्होंने ही उस परिस्थिति से सम्पूर्ण समाज को बाहर निकालकर एक आधारभूत संरचना निर्मित करी, जिसके प्रभाव से आज विश्व में सनातन धर्म प्रखरता व दृढ़तापूर्वक स्थित है ।

वास्तव में संत, गुरुजन आदि अत्यंत सजग होते हैं व परिस्थितियों को पहले से ही भाँपकर उससे बाहर निकलने का मार्ग समझ लेते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप उनके मार्गदर्शन में अनेकों मनुष्यों का उद्धार होता है। ऐसे ही जीवन में प्रायः प्रत्येक उतार चढ़ाव की स्थिति में सही–गलत का भेद करने व सटीक मार्गदर्शन के लिए संत की आवश्यकता होती है, अतः यह पंक्तियां जो वर्षों पूर्व तुलदीदास जी ने रची थीं कि **'बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता'** वो आज भी प्रासंगिक है क्योंकि बिना हरि की इच्छा से मनुष्य को संत अथवा गुरु की प्राप्ति नहीं होती है, बिना उचित मार्गदर्शन के अच्छे से अच्छा ज्ञान भी व्यर्थ चला जाता है । मनुष्य को जीवन के प्रत्येक स्तर पर मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है, जिससे वो अपने लक्ष्य व कर्तव्यों का निर्वहन उचित ढंग से कर सके। एक उपयुक्त व नैतिक मूल्यों से निर्मित समाज की स्थापना के लिए संतो का योगदान महत्वपूर्ण है, पहले भी था, आज भी है एवं आगे भी रहेगा।

आह्वान

संजू पाठक
इंदौर

मदिरालय पर भीड़ देखकर,
मन मेरा पीड़ित होता है।
ईश्वर प्रदत्त सुंदर शरीर ,
जब रोग ग्रसित होता है।
सारे सुख, सुविधा वैभव का ,
आकर्षण न कोई रह जाता है।।
गड्ढों ,सड़कों, नालों पर,
मानव विक्षिप्त दिख जाता है।
।

संयम का ही नाम है जीवन,
अनुपालन आवश्यक जीवन में।
मदिरा, सिगरेट, तंबाकू, बीड़ी
जहर घोलतीं जीवन में।
हाल बुरा है उन श्रमिकों का
दिन भर जो मजदूरी करते।
लेकर दिहाड़ी मधु शाला पर
हो बेफिक्र सुरापान करते।।

खुद भूख की ना कोई चिंता,
बच्चे भी भूखे सो जाते।
भोर हुई तो आंख मसल कर
भूखे पेट काम पर जाते।।
कैसे, कोई इनको समझाए?
मदिरालय बस बंद करा दो।
बच्चे बिलख रहे झोपड़ में,
रोटी इनके घर पहुंचा दो।।

हर वर्ष मई इकत्तीस को ,
निषेध दिवस मनाते जोरदार।
छोटे छोटे संकल्पों से ,
जन जीवन का होगा उद्धार।
आह्वान युवाओं से मेरा,
आओ सुंदर संकल्प करें।
मादक द्रव्यों का कर निषेध
हम स्वस्थ समाज का सृजन करें।।

मार्गदर्शन एवं परामर्श की आवश्यकता

आधारभूत संरचना और व्यक्तिगत सलाह की भूमिका

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

निर्णयन में मार्गदर्शन की अवधारणा : जीवन की निरन्तरता को बनाये रखने के लिए समय–समय पर मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। यदि व्यक्तिगत् तौर पर किसी व्यवस्था के माध्यम से नियमित परामर्श की सुविधा प्राप्त हो जाए तो अत्यधिक संतोष की अनुभूति होती है। कई बार यह देखने में आता है कि व्यक्ति सही निर्णयन के अभाव में स्वयं को भटका हुआ महसूस करता है। आखिर मनःस्थिति की व्यथा को वह किससे बताये अथवा इस सम्बन्ध में किस प्रकार से सलाह प्राप्त कर सकता है यह प्रश्न व्यक्ति के मन में क्रोंधता रहता है। अगर किसी कारण या परिस्थितिवश व्यक्ति के द्वारा आत्म–विश्लेषण कर लिया गया तो उसे ज्ञात हो जाता है कि वास्तविक रूप से वह सही स्थिति का निर्णय नहीं कर पा रहा है। मार्गदर्शन प्रदान करने के विभिन्न मामलों में यह पाया गया है कि सामान्यतः इसके द्वारा व्यक्ति की स्थिति का पता लगाकर उसके अनुकूल जीवन में सही चयन हेतु व्यवस्था की बात की जाती है।

व्यक्तिगत् परामर्श का स्वरूप : एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से सम्बन्ध बन जाए तो निश्चित रूप से भावनाओं का आदान–प्रदान आसानी से हो जाता है। सामान्यतः एक दूसरे से जुड़ने की प्रक्रिया के पश्चात् ही परामर्श की भूमिका प्रारम्भ होती है। व्यक्तिगत् परामर्श की स्थिति में आपसी विश्वास का धरातल जितना मजबूत होगा उतना ही यह स्वरूप सशक्त होता जाएगा। जब व्यक्ति को यह पता चल जाता है कि मेरी समस्त बातचीत और उसके सभी पहलू पूर्णतः गोपनीय रहेंगे तो व्यक्ति के द्वारा खुलकर बात हो पाती है तथा उसके मन में निश्चिंतता के भाव निर्मित हो जाते हैं।

मार्गदर्शन एवं परामर्श की क्रियाविधि : मनुष्य के लिए जितने भी प्रयास जगत् में किये गये उसमें मार्गदर्शन एवं परामर्श की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया थी। जब हम सामूहिक परिदृश्य को अपने अनुभव के समक्ष रखकर देखते हैं तब यह स्पष्ट हो जाता है कि मार्गदर्शन एवं परामर्श की उपयोगिता वर्तमान संदर्भ में कितनी अधिक प्रासंगिक है। जीवन में किसी भी व्यक्ति के लिए सार्वजनिक अपमान सबसे बड़ी पीड़ा होती है और प्रायः व्यक्ति स्वयं को बदलने के लिए यहीं से मानसिक रूप से तैयार भी होता है। स्वयं के विकास के लिए समयानुसार मार्गदर्शन प्राप्त करते रहना तथा अधिक कठिनाई की अवस्था में व्यक्तिगत् परामर्श लेने के लिए उत्सुक रहना व्यक्ति की जिज्ञासा का परिणाम होता है। सामान्य अध्ययन के द्वारा यह पाया गया है कि व्यक्ति अपने अहम् के कारण प्रायः किसी प्रकार के मार्गदर्शन लेने से बचता है और स्वविवेक को सब कुछ मानकर अपना निर्णय ले लेता है। व्यक्तिगत् परामर्श की स्थिति भी लगभग इसी प्रकार की है जिसके अन्तर्गत् व्यक्ति किसी निश्चित उद्धेश्य के लिये परामर्श को प्राप्त करने हेतु मानसिक रूप से तैयार नहीं होता है इसके पीछे उसकी मान्यता होती है कि मैं पूर्णतः ठीक हूँ और मुझे किसी परामर्श की आवश्यकता नहीं है।

आधारभूत संरचना का निर्माण : किसी भी संस्थागत् व्यवस्था द्वारा यदि मार्गदर्शन एवं परामर्श का प्रयास किया जा रहा है तो निश्चित रूप से वहाँ कुछ महत्वपूर्ण आधारभूत संरचना का होना आवश्यक है। आज के परिवेश में मार्गदर्शन के साथ परामर्श के क्षेत्र में पर्याप्त संभावनाएँ दिखायी दे रही हैं क्योंकि इस विषयगत् भूमिका के अन्तर्गत् शिक्षण एवं प्रशिक्षण हेतु डिग्री तथा डिप्लोमा कोर्स विभिन्न शासकीय एवं अशासकीय स्तर पर चालाये जा रहे हैं। जीवन के विभिन्न आयामों पर नज़र डाली जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि बहुत सारी स्थितियाँ या तो व्यक्ति के लिए उसके व्यावसायिक अथवा तकनीकी क्षेत्र का हिस्सा बनने के लिए तैयार हैं केवल उसे सही मार्गदर्शन एवं परामर्श की आवश्यकता है। सामाजिक सहयोग के स्वरूप में एक नई दिशा प्रदान करने के भाव को दृष्टिगत् रखते हुए यदि कोई सार्थक पहल की जाये तो निश्चित रूप से एक सुनिश्चित स्थान का होना अनिवार्य होता है। जब एक व्यवस्था के अन्तर्गत् मार्गदर्शन एवं परामर्श की सेवाएँ प्रदान किया जाना है तो वहाँ कम्प्यूटर और इंटरनेट की सुविधा का होना जरूरी होता है जिससे सूचना क्राँति का लाभ उठाया जा सके। संस्था के माध्यम से सहयोग की भूमिका निभायी जा रही हो तो अपेक्षा का स्तर सामाजिक तौर पर बढ़ जाना अपवादजनक स्थिति नहीं मानना चाहिए और साधनों के साथ व्यक्तिगत् व्यवहार कुशलता किसी भी स्थिति में बनाये रखना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ और पाठ्य सामग्री की उपलब्धता : मार्गदर्शन एवं परामर्श की प्रक्रिया में पुरातन संदर्भो के साथ नवीनतम् पाठ्य सामग्री का समायोजन होना चाहिए जिससे कार्य करने के आधारभूत पहलुओं की जानकारी प्राप्त हो सके। कैरियर निर्माण के विभिन्न आयामों को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग विषय के संदर्भ ग्रन्थों का यथोचित रूप से चयन किया जाना चाहिए। वर्तमान समय और उसकी परिवर्तनशीलता को दृष्टिगत् रखते हुए उन पाठ्य सामग्री का चयन किया जाना चाहिए जिससे विषयगत् विविधता के साथ स्पष्टता का भाव प्रकट हो सके। मार्गदर्शन एवं परामर्श की सेवाओं में गतिशीलता बनाये रखने हेतु संदर्भ ग्रन्थों और पाठ्य सामग्री को नियमित रूप से अपडेट करने की व्यवस्था होना चाहिए।

आधुनिक परिवेश में नवीनतम् जानकारी का विकास : ज्ञान के विकास की स्थितियों पर पैनी दृष्टि रखते हुए मार्गदर्शन एवं परामर्श की भूमिका को गहराई से समझने की आवश्यकता है। प्रायः यह देखने एवं सुनने में आता है कि व्यक्ति के द्वारा पुराने ज्ञान और अनुभव से काम चलाने की प्रवृत्ति समाज में दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। मार्गदर्शन एवं परामर्श द्वारा सबसे बड़ा फायदा यह होता है कि व्यक्ति स्वयं के प्रति जागृत हो जाता है और अपने परिवेश के माध्यम से नवीनतम् के प्रति आस्था विकसित कर लेता है।

कैरियर एवं व्यक्तित्व विकास का स्पष्टीकरण : जब व्यक्ति के द्वारा स्वयं के प्रति कोई दृष्टिकोंण विकसित किया जाता है तो सामान्यतः यह स्वीकार कर लिया जाता है कि मैंने अपने व्यक्तित्व का विकास कर लिया है। मार्गदर्शन एवं परामर्श की आवश्यकता को देखते हुए यह निर्धारित करना जरूरी हो जाता है कि कैरियर निर्माण के पहलुओं से कई बार व्यक्तित्व विकास का सम्बन्ध सकारात्मक नहीं हो पाता है। व्यक्ति के द्वारा चुनौतीपूर्ण तरीके से किसी कैरियर का चयन किया जाना उसके व्यक्तित्व से अलग क्रियाविधि हो सकती है लेकिन इसके पीछे किसी निजी या सामाजिक कारण को स्वीकार किया जा सकता है। प्रायः मार्गदर्शक एवं परामर्श देने वाले व्यक्तियों द्वारा कैरियर निर्माण हेतु उपलब्ध व्यक्तियों को उनकी अभिरूचि के अनुसार चयन के लिए सुविधाजनक प्रस्ताव उपलब्ध कराये जाते हैं।

अभिप्रेरणात्मक साहित्य एवं कार्यशाला की उपयोगिता : मार्गदर्शन एवं परामर्श हेतु किसी भी आधारभूत संरचना को बनाते समय स्थूल साधनों के साथ सूक्ष्म संसाधनों की महत्ता को इन्कार नहीं किया जा सकता हैं। जब हम अभिप्रेरणात्मक साहित्य की बात करते हैं तो लगता है कि व्यक्ति के द्वारा इसकी व्यवस्था स्वयं कर ली जाएगी। मार्गदर्शन एवं परामर्श की सूक्ष्म प्रक्रिया यह संदेश देती है कि जिस वातावरण का निर्माण आप करने जा रहे हैं वहाँ अभिप्रेरणात्मक साहित्य की उपलब्धता अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि अन्तःकरण की सुप्तता को यही साहित्य जागृत कर सकता है। आज शासकीय एवं अशासकीय स्तर पर विभिन्न पत्र एवं पत्रिकाओ का प्रकाशन नियमित, सप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, द्विमासिक, त्रैमासिक तथा छमाही के साथ वार्षिकाँक की उपलब्धता लगभग सम्पूर्ण सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक, दार्शनिक, ऐतिहासिक, साँस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक, तथा आध्यात्मिक स्वरूप में विद्यमान रहती है।

विश्व की समस्त समस्याओं का कारण व समाधान समाहित है

गीता के पहले श्लोक में

डॉ. श्याम सुन्दर पाठक 'अनन्त'
लेखक, कवि, मोटीवेशनल स्पीकर,
असिस्टेंट कमिश्नर (वस्तु एवं सेवा कर)
उत्तर प्रदेश

श्लोक– 1

धृतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः । मामकाः पाण्वाश्चौव किमकुर्वत सञ्जिय ।।

गतांक में इस श्लोक की व्याख्या से आगे.....

मनोवैज्ञानिक पक्ष– गीता के इस पहले श्लोक के मनोवैज्ञानिक पक्ष को भी अवश्य समझें । जैसा कि पहले ही स्पष्ट किया कि धर्मक्षेत्र मन के अन्दर चलने वाला युद्ध है, तो एक बात तो स्पष्ट है कि सम्पूर्ण गीता एक मनोवैज्ञानिक ग्रन्थ भी है । इसके हर श्लोक में मनोविज्ञान का कोई ना कोई पहलू भी अवश्य छिपा है ।

मनुष्य के जीवन का एक मनोवैज्ञानिक पहलू ये है कि उसे अपनी हर चीज फिर चाहे वो कोई व्यक्ति हो या वस्तु , बहुत प्यारी होती है, उसमें भी यदि वह उसकी स्वयं की सन्तान हो तो फिर तो वह मोह की सीमा तक पहुँच जाती है। मोह में व्यक्ति बिल्कुल अन्धा हो जाता है। मोह में पड़कर व्यक्ति सही– गलत का निर्णय नहीं कर पाता और निर्णय कर भी ले तो भी मोहवश करता वही है जो उसका मन कहता है, ना कि वह जो उसकी विवेकशील बुद्धि कहती है। धृतराष्ट्र भी तो मोह में इतना अन्धा हो गया था कि अपने पुत्र के अनुचित आग्रह को भी सही मानकर उसका साथ दे रहा था। दुर्योधन के लालच से भी ज्यादा खतरनाक था– धृतराष्ट्र को मोह। धृतराष्ट्र को मोह ना होता तो शायद वह दुर्योधन के अन्तहीन लालच या महत्वाकांक्षा को नियन्त्रित कर पाता, लेकिन मोहग्रस्त व्यक्ति तो कभी सही निर्णय ले ही नहीं पाता। दुर्योधन जानता था कि उसके पिता उसके मोह से आबद्ध हैं, तो उसके हर उचित– अनुचित निर्णय में उसके साथ ही रहेंगे, इसलिए वह मनमानी करता रहा। दुर्योधन की महत्वाकांक्षा को लालच के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचाने वाले धृतराष्ट्र हैं।

मोह में अन्धा हुआ धृतराष्ट्र जो आँखों से ज्यादा मन से ज्यादा अन्धा था, संजय से कहता है कि हे संजय, धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में मेरे पुत्र और पाण्डु के पुत्र क्या कर रहे हैं, ये बताओ? गौर करिए इन शब्दों पर– मेरे पुत्र और पाण्डु के पुत्र। ये हाल तो तब है जबकि पाण्डु उसका सगा छोटा भाई है, तब भी वह अनुज के पुत्र कहने की बजाए बाकायदा नाम लेकर सम्बोधित कर रहा है– पाण्डु के पुत्र, जैसे पाण्डु कोई गैर हो, या दुश्मन हो। मन का मोह यही करता है, और मोह एक गलत निर्णय नहीं दिलाता, बल्कि अनेक गलत निर्णयों की श्रृंखला खड़ी कर देता है। जैसा धृतराष्ट्र के साथ हुआ। धृतराष्ट्र के अन्धे मोह ने समस्त कौरव कुल का नाश कर दिया, हाँलाकि खुद जीवित रह गया। मोह ऐसा ही होता है, सब कुछ नष्ट कर देने के बावजूद भी खुद जीवित रह जाता है, खुद कभी खत्म नहीं होता। मोहग्रस्त व्यक्ति सब कुछ छिन जाने के बावजूद भी कुछ देख नहीं पाता। इसलिए मोह व्यक्ति को अन्धा बना देता है। धृतराष्ट्र कोई व्यक्ति नहीं, साक्षात मोह का प्रतीक है, इसलिए अन्धा है और अपने अन्धेपन में सभी को अन्धकूप में धकेल दे रहा है। मोह में अन्धा व्यक्ति स्वयं का तो नाश करता ही है, उसका भी नाश कर देता है, जिसके लिए वह मोह कर रहा है। क्या हमारे

अन्दर भी तो कोई ना कोई धृतराष्ट्र नहीं बैठा है?

आपने कभी देखा है, किसी जानवर या पंक्षी को अपने बच्चों के लिए मोह में इकट्ठा करते। वे अपने बच्चों को पालते हैं, पोसते हैं और जब वो बड़े हो जाते हैं तो उन्हें अपने मोह पाश से मुक्त कर देते हैं। दूसरी तरफ मनुष्य है जो बच्चों को इस आशा में पालता– पोसता है कि वे उसकी बुढ़ापे में सेवा करेंगे। इसके अलावा वे अपने बच्चों के लिए इतना जोड़ के रख जाना चाहते हैं कि उनके जाने के बाद भी उनके बच्चे परेशान न हों, जबकि असली परेशानी की जड़ ही यही है। कौन व्यक्ति नहीं जानता कि–

पूत कपूत तो क्यों धन संचौ। पूत सपूत तो क्यों धन संचौ ।।

अर्थात् पूत कपूत (बुरा) है तो किसके लिए इकट्ठा करना क्योंकि वो जो भी इकट्ठा किया, सब उड़ा देगा और पूत सपूत (अच्छा) है तो भी किसके लिए धन इकट्ठा करना क्योंकि सपूत अपनी उन्नति के लिए स्वयं ही सब कुछ हासिल कर लेगा। वो अपने आप ही धन कमा लेगा।

ये बात हर व्यक्ति जानता है लेकिन मन के अन्दर का धृतराष्ट्र मानता ही नहीं। सात पीढ़ी तक के लिए उचित– अनुचित किसी भी माध्यम से बस धन कमाने की अन्धी होड़ मची है। शायद ही कोई व्यक्ति हो जो धर्म– अधर्म के मार्ग से परिचित ना हो, लेकिन जब बात अपनी सन्तान की हो तो कोई भी मार्ग अनुचित दिखाई नहीं देता। पैसा देकर भी बच्चे की नौकरी लग जाए तो भी अनुचित नहीं लगता। उस समय मन का धृतराष्ट्र भूल जाता है कि गलत साधनों से पाई नौकरी किसी होनहार व मेहनती बच्चे के सपनों को कुचल देती है। लेकिन नहीं, मेरे बच्चे की नौकरी लग जाए, उसका भला हो जाए, फिर चाहे किसी दूसरे का नुकसान हो जाए। धृतराष्ट्र भी तो यही कर रहा था, मेरे बेटे को राज्य मिल जाए, फिर भले ही छोटे भाई के बच्चों को वन– वन धक्के क्यों ना खाने पड़ें? उनके लिए पाँच गाँव भी नहीं और अपने पुत्र के लिए हस्तिनापुर भी छोटा है। इसलिए मन के अन्दर के मोह को कभी भी सत्य के ऊपर हावी नहीं होने देना चाहिए वरना वह मोह सभी को संकट में डाल सकता है।

प्रेरणा पक्ष– गीता का प्रत्येक श्लोक ना केवल गहरा आध्यात्मिक अर्थ समेटे है, बल्कि जीवन के किसी ना किसी पहलू पर भी प्रकाश डालता है। कोई तो कारण होगा कि इस श्लोक को गीताकार ने गीता का पहला श्लोक बनाया। पहला और आखिरी हमेशा बहुत महत्वपूर्ण होता है। गीता का आखिरी श्लोक तो महत्वपूर्ण है ही, लेकिन पहले श्लोक में तो संसार की हर समस्या का कारण और निराकरण दोनों छिपे हैं। जब तक जीवन में मेरे और तेरे रहेगा, तब तक महाभारत होता रहेगा। ऐसा नहीं है कि महाभारत वह युद्ध है जो कौरवों और पाण्डवों के मध्य द्वापर युग में हुआ। हर उस जगह, हर उस परिवार में महाभारत होगा– जहाँ अपने– पराये में भेद होगा। सारे सुख, सारी समृद्धि, सारी कामयाबी मेरे और मेरे परिवार के लोगों को मिले तब तक महाभारत युद्ध चलता रहेगा। दो आपस में युद्धरत देशों से पूछो कि भाई तुम किसलिए लड़ रहे हो? जाना तो जीतने वाले देश के सत्ताधीश को भी है। दुनिया जीतने वाले भी खुद को जाने से रोक नहीं पाए तो किस बात के लिए युद्ध। क्या मन के विकारों को जीत पाए? जब–जब और जहाँ–जहाँ मेरे–तेरे, अपने–पराए का भेद होगा, महाभारत होगा ही होगा, उसे कोई नहीं रोक सकता। जब तक परिवार में, समाज में आपस में मिल–बाँट कर खाना–रहना होगा तब तक कोई युद्ध नहीं होगा और जैसे ही अपने–पराए का मोह जाग्रत हुआ, महाभारत शुरु। फिर चाहे वह परिवार हो, समाज हो, या फिर विभिन्न देश। इसलिए हमारे मनीषियों ने भारतीय संस्कृति की नींव रखी–

"वसुधैव कुटुम्बकम्" अर्थात् सारा संसार ही मेरा परिवार है। और यदि यह भावना आ गई कि सारा संसार मेरा ही तो परिवार है, क्या हुआ कि कोई बच्चा मेरे यहाँ पैदा नहीं हुआ, वह भी मेरा ही तो है, तो कभी महाभारत होगा ही नहीं। यदि धृतराष्ट्र पाण्डु पुत्रों को अपना मान कर न्यायपूर्वक व्यवहार करता तो महाभारत होता ही नहीं।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित् दुःख भाग्भवेत ।।"

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों, सभी का भला हो और किसी को कोई दुःख ना हो। क्या ऐसी उद्दात्त प्रार्थना विश्व के किसी अन्य संसक्ति में मिलती है? हमारे मनीषियों ने इस प्रार्थना को इसलिए दिया ताकि अपने पराये का भेद खत्म हो जाए और किसी युद्ध या महाभारत की कोई सम्भावना ही समाप्त हो जाए। इस प्रार्थना पर गौर कीजिए, ये नहीं कहा कि मैं सुखी होऊँ या मेरे सम्बन्धी सुखी हों, बल्कि कहा कि सभी सुखी हों क्योंकि समस्त विश्व ही मेरा परिवार है। जब तक ये भावना फिर से पुनर्जीवित होकर प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर में नहीं उतरेगी, तब तक सारा संसार किसी ना किसी युद्ध की आग में झुलसती ही रहेगा। गीता का केवल एक यह श्लोक भी किसी के ठीक से समझ आ जाए, तो उसका उद्धार हो जाए, सारे संसार की हर समस्या का तुरन्त और असरकार समाधान हो जाए, यदि तेरे–मेरे, अपने– पराए, मित्र– शत्रु का भाव समाप्त हो जाए। किसी भी धर्म, जाति में पैदा हुआ व्यक्ति अन्ततः मनुष्य ही है, और प्रत्येक मनुष्य उस एक परमपिता परमात्मा की सन्तान है। मूर्ख हैं वे लोग जिन्होंने, ईश्वर को भी बाँट लिया है। और जो लोग ईश्वर तक को बाँट देते हों, उनके लिए इन्सान– इन्सान को बाँटने में कितनी देर लगेगी। आज सम्पूर्ण संसार में यही तो हो रहा है। इसलिए धृतराष्ट्र कोई द्वापर युग में पैदा हुए शान्तनु के पुत्र नहीं थे, बल्कि हर मनुष्य के अन्दर बैठा हुआ मोह ही है, जो उसी विवेकशील बुद्धि को हर कर अन्धा कर देता है । बस मैं और मेरा में ही मन रुपी धृतराष्ट्र सबको अन्तहीन युद्ध की आग में झोंक देता है। यदि हम चाहते हैं कि हमारा घर, हमारा समाज, सम्पूर्ण विश्व स्वर्ग बन जाए तो हमें इस मेरे– तेरे, अपने– पराए, मित्र– शत्रु के भेद को समाप्त करना होगा।

इसलिए गीताकार ने इस श्लोक को गीता के पहले श्लोक के रुप में चुना। ये गीता का पहला श्लोक तो है ही, बल्कि अध्यात्म का प्रवेश– द्वार श्लोक भी है।

(क्रमशः)

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई-पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

रामायण का अद्भुत पात्र जिसने रामकाज में सहयोग किया

राक्षसी से साध्वी बनी– त्रिजटा

कालिका प्रसाद सेमवाल
उत्तराखंड

त्रिजटा को सीताजी ने बड़े प्रेम से मां कहा था। यह सौभाग्य और किसी को कभी नहीं मिला! सीताजी ने त्रिजटा से न केवल अपनी व्यथा सुनाई, बल्कि चिता जलाने के लिए मदद भी मांगी! त्रिजटा ने समझाया और मनाया। ठीक उसी तरह जैसे एक मां अपनी बेटी को डांटकर प्रेम से समझाती है।ये अवसर भी किसी और को नहीं मिला!

श्रीराम को अवतार और सीताजी को उनकी शक्ति बताया गया है। परमशक्ति भी किसी से सहायता मांग बैठे, यह प्रसंग आपको कहीं नहीं मिलेगा!

ऐसे वर्णन मिलते हैं कि त्रिजटा एक राक्षसी थी! रावण की सेविका थी! लेकिन बाद में उसका एक आदर्श स्वरूप देखने को मिलता है!

त्रिजटा के पूर्वज शुरू से ही लंका राज्य के सेवक रहे थे। त्रिजटा ने भी कुलपरंपरा के अनुसार रावण की सेवा की। वृद्धा वस्था आने पर उसे एक आरामदायक और सम्मानित पद दिया गया। वह अशोकवाटिका में तैनात स्त्री पहरेदारों की प्रमुख बनी। यह वाटिका राजकुल की स्त्रियों के विहार और मनोरंजन के लिए बनी थी।

त्रिजटा का ये नाम क्यों पड़ा? दरअसल, उसमें तीन विशेषताएं थीं। वह ईश्वर में एवं अवतारों में विश्वास करती थी। अपने कार्यो में अति कुशल थी। उसमें अच्छे बुरे का विवेक था। अपने इन गुणों के चलते वह राक्षसों की भीड़ में बिल्कुल अलग दिखती थी! लंका के लोग व्यंग्य से उसे त्रिजटा कहते थे। राजकुमार विभीषण का प्रगाढ़ स्नेह उनपर था अतः परिहास में उन्हें विभीषण की पुत्री भी कहा जाता था

अब एक दिलचस्प बात है! लंका में ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं थी जो रावण से नाराज थे! राक्षस अविन्ध्य, ऋषि विश्रवा, मंत्री माल्यवंत, महर्षि पुलस्त्य और विभीषण आदि लोग रावण की नीतियों के खिलाफ थे!

परंतु ये लोग रावण से असहमत क्यों थे? क्योंकि रावण शक्ति के मद में पूरे विश्व से शत्रुता करता जा रहा था। उसने अयोध्या के सम्राट अनरण्य की हत्या की। देवराज इंद्र को बांधकर सरेआम अपमानित किया। महादेव के निवास स्थान कैलाश को उठाने की कोशिश की। सौतेले भाई कुबेर की पुत्रवधू पर अत्याचार किया। अपनी सगी बहन मीनाक्षी के पति कालकेय सम्राट विधुतजीह्वा को मारा।

रावण को ये सनक थी कि वह संसार की हर अद्वितीय वस्तु को लंका लाएगा। अपने पति की मृत्यु से विचलित उसकी बहन मीनाक्षी ने इसी को आधार बनाकर उसे सबक सिखाने की सोची।

यहां एक बात जानते हैं। अपने बहनोई को मारने के बाद रावण ने बहन मीनाक्षी को दंडकारण्य का राज्य दे दिया था। वह खर और दूषण की सहायता से राज्य करती थी। हाथ पैरों के नाखून बढ़ाते जाने की सनक के चलते उसे आदिवासी लोग शुपनखा भी कहते थे।

अपने वनवास के दौरान जब राम दंडकारण्य पहुँचे तो शुपनखा ने उनसे शत्रुता कर ली। युद्ध हुआ। खर दूषण मारे गए।

अब मौका मिल चुका था। वह लंका पहुंची। भरे राज्यदरबार में रोने– धोने और रावण को फटकारने के बाद कहा– 'सीता सभी गुणों में एक अनन्य स्त्री है। ऐसा लगता है जैसे उसे

खुद विधाता ने गढ़ा है। वह करोड़ों नारीरत्नों से भी बढ़कर है। उसे रावण के पास लंका में ही होना चाहिए' रावण की मति मारी गयी। सीताजी का हरण हुआ। उन्हें अशोक वाटिका में रखा गया जो अंतः पुर का ही एक हिस्सा थी। अब यहां से त्रिजटा की भूमिका शुरू होती है। त्रिजटा ने तीन स्तरों पर अपने कार्य किये।

सबसे पहले तो उसने श्रीराम की पत्नी और अयोध्या की महारानी जनकनंदिनी सीता को लंका की परिस्थिति समझाई। उन्हें एक विधान के बारे में बताया। दरअसल पुत्रवधू पर अत्याचार के बाद महर्षि पुलस्त्य, विश्रवा और नलकुबेर ने एक श्रापरूपी विधान बनाया था। इसके अनुसार रावण किसी स्त्री की अनुमति लिए बिना उसे नहीं अपना सकता था। त्रिजटा ने सीताजी से कहा कि वह किसी भी तरह के दबाव या डर में न आएं क्योंकि यह विधान उनकी रक्षा करेगा। उसने अन्य प्रहरियों को भी सीता को परेशान करने से रोका।

दूसरे स्तर पर त्रिजटा ने विभीषण,अविन्ध्य आदि प्रभावशाली लोगों को इसकी सूचना दी। अविन्ध्य उन्हें श्रीराम के बारे में समाचार भेजते थे। उन्होंने ही त्रिजटा को श्रीराम और सुग्रीव की मित्रता के बारे मे बताया।इन समाचारों से वह सीता का मनोबल बनाये रखती थीं।

तीसरे स्तर पर उन्होंने राजकुल की स्त्रियों को विश्वास में लिया। उन्हें बताया कि सीताजी अयोध्या नरेश राम की पत्नी और मिथिला के सम्राट जनक की पुत्री हैं। ऐसी स्त्री का हरण विनाशकारी है। लंका की महारानी मंदोदरी ने सीता को छोड़ देने की सलाह अपने पति रावण को दी। मेघनाद की पत्नी सुलोचना ने खुलकर सीताजी का समर्थन किया। रावण की चतुराई धरी रह गयी। उसने बहुत गोपनीय ढंग से सीताहरण किया था। लेकिन सारी लंका जान गई। जल्दी ही हनुमान भी आ पहुंचे। अतुलित बल के धाम। श्रीरामचन्द्रजी के दूत। विभीषण ने उन्हें अशोकवाटिका में जाने की युक्ति बताई। उस शाम को रावण भी वहां आया। धमकी दी।यदि एक महीने तक सीता ने निर्णय नहीं किया तो वह उनका वध कर देगा। उसके जाने के बाद त्रिजटा ने सीताजी को अपना सपना सुनाया।

श्रीरामचरितमानस के अनुसार त्रिजटा ने कहा–

'सपने वानर लंका जारी, जातुधान सेना सब मारी'।

'वानर ने लंका में आग लगाई है और राक्षस सेना को मारा है'

अब एक सवाल लेते हैं। त्रिजटा ने ऐसा क्यों कहा? देखिए, इसे समझना बहुत ही सरल है। वह जानती थी कि राम के दूत जरूर आएंगे। उनके द्वारा कोई ऐसा कार्य जरूर होना चाहिए जिससे शासक वर्ग भयभीत हो उठे! रावण का मनोबल टूटना बहुत जरूरी था।यह कार्य आग ने किया। रावण की प्रतिष्ठा उसकी अजेयता में थी। उसकी राजधानी में शत्रु द्वारा आग लगाने से उसकी यह प्रतिष्ठा धूल में मिल गयी। उसके मित्र राजाओं ने सोचा। जो अपनी राजधानी नहीं बचा सका, वो हमारी रक्षा कैसे करेगा! इसका नतीजा क्या निकला? श्रीराम की सेना पूरा दक्षिण भारत पार करती हुई समुद्र तट पर आ पहुँची। किसी राज्य ने उन्हें नहीं रोका।

युद्ध का परिणाम धर्म की विजय में हुआ। बल, छल और आडंबर पर आधारित राक्षसी संस्कृति नष्ट हुई। विभीषण सम्राट बने। सत्ता परिवर्तन के उस दौर में त्रिजटा का कोई जिक्र नहीं आता! लंका के तमाम निवासियों ने नगर के बाहर जाकर रामजी के दर्शन किए। त्रिजटा नहीं गयी! शायद वो इस बात से दुखित थी कि सीता जैसी सत्यस्वरूपा स्त्री को अग्नि परीक्षा देने हेतु कहा गया था! इसके बाद हमकुछ अस्पष्ट संकेत मिलते हैं । इनसे पता चलता है कि त्रिजटा ने अपने आपको धर्म और अध्यात्म में लीन कर लिया।

जो भी हो, माता सीता को त्रिजटा याद रहीं। एक कथा बताती है कि श्रीराम और माता सीता उससे मिलने हेतु लंका भी आये। त्रिजटा ने काशी में रहकर महादेव की भक्ति करने की इच्छा जताई। ऐसा ही हुआ।

कहते है काशी में आज भी त्रिजटा का एक मंदिर है। यह मंदिर काशी विश्वनाथ के पास है। साल में एक दिन यहां त्रिजटा की विशेष पूजा होती है। सुहागिन स्त्रियों द्वारा यहां सब्जियां चढ़ाकर अपने सुहाग की मंगलकामना की जाती है।

त्रिजटा की कथा बताती है कि परमशक्ति के साथ जुड़ाव और अच्छे लोगो की मदद करना कभी व्यर्थ नहीं जाता। माता सीता की मदद करके न केवल उसने अपने पूर्व जीवन का प्रायश्चित किया बल्कि श्रीराम की विजय में भी सहायक बनी। इस एक घटना ने लंकावासी राक्षसी त्रिजटा को काशीवासी साध्वी त्रिजटा में बदल दिया।

राष्ट्र चेतना का महामंत्र वन्देमातरम्

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

''वन्दे मातरम्'' राष्ट्रीय गीत से प्रत्येक भारतीय वाकिफ है। वन्दे मातरम् भारतीय राजनीतिक जीवन में राष्ट्रीय जागरण का अनूठा स्त्रोत रहा है। मातृभूमि के प्रति आस्था भक्ति रस से मन मस्तिष्क को आप्लावित करने और उसके लिए प्राणोत्सर्ग करने तक की मानसिकता जगाने का अद्‌भुत बल इसमें रहा है। कुछ लोग इसे युद्ध घोष गान की संज्ञा देते हैं।

वन्दे मातरम् की रचना सन् 1875 में हुई थी। उस समय यह गीत बंग भूमि क वंदना के रुप में स्वतंत्र मात्र था तथा बंगाल को ध्यान में रखकर 'सप्तकोटि जन हित कारिणी द्वि सप्त कोटि भुजबल धारिणी 'ही लिखा गया था। किंतु देश के दूसरे क्षेत्रों में इस रचना की लोकप्रियता को देखते हुए बाद में इसे सार्वदेशिक रुप दिया गया तथा भारत की उस समय की जनसंख्या के अनुसार उपर्युक्त पंक्ति को परिवर्तित किया गया–''त्रिष कोटि जन हित कारिणी, द्विविस कोटि भुजबल धारिणी।'' बकिमचंद्र चट्‌टोपाध्याय इसके रचनाकार थे। वह अपने समय के नहीं, परवर्ती समय के साहित्यकारों में भी अग्रगण्य थे। उनके प्रणीत उपन्यासों की गणना आज भी उच्च कोटि में की जाती है, लेकिन वन्दे मातरम् ने उन सबको पीछे छोड़ दिया। यदि बंकिम चन्द्र कुछ और नहीं भी लिखते तो भी वन्दे मातरम् उन्हें अमरता प्रदान करने के लिए पर्याप्त था।

वन्दे मातरम् की रचना की प्रेरणा उपनिषद की महाशक्ति ''माता पृथ्वी पुत्रोऽहं पृथिव्या''(यह पृथ्वी मेरी माता है और मैं इसका पुत्र हूं) से मिली थी। इस मंत्र की भावना की प्रेरक शक्ति तो बाद के दिनों में देखी गई, लेकिन उसका प्रस्फुटन शनैः–शनैः हुआ। सन् 1872 में रंगपुर नामक स्थान में तत्कालीन शासकों के विरुद्ध सन्यासियों ने बगावत की थी। इसी घटना को आधार बनाकर बंकिम चंद्र ने 'आनंद मठ' उपन्यास लिखा था, जिसके प्रथम संस्करण का प्रकाशन 1882 में हुआ। इस उपन्यास में वन्दे मातरम् को स्थान दिया गया। उपन्यास में वन्दे मातरम् का उपयोग आन्दोलनकारी सन्यासियों द्वारा प्रयाण गीत के रुप में किया गया। वन्दे मातरम् मूलतः मातृभूमि को संबोधित है, किंतु आनंद मठ के आंदोलनकारी सन्यासी इसे प्रयाण गीत ही मानते हैं तथा भगवती दुर्गा के संबोधन गीत के रुप में अपने प्रयाण में सफलता की कामना से गाते हैं। बाद में आनंद मठ का यह प्रयाण गान 'क्रांति गीत' बन गया। राष्ट्रीय स्तर पर इस गीत को सर्वप्रथम 1886 के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बैठक में गुरु रवीन्द्र नाथ ठाकुर सस्वर गाया। वन्दे मातरम् में समस्त देश को अपनी ओर आकर्षित किया। यह राष्ट्र चेतना का महामंत्र बन गया। यह हालांकि बड़ी घटना साबित हुई और बंगाल का राजनीतिक वातावरण वन्दे मातरम् हो गया।

'वन्दे मातरम्' की भाषा संस्कृत मिश्रित बंगला है। इसके शब्दों में समय–समय पर काट–छांट तथा बदलाव होते रहे हैं। शब्द संयोजन बेहद कोमल तथा प्रांजल है। 'शुभ्र ज्योत्सना पुलकित यामिनी' जैसी कितनी पंक्तियां बेजोड़ हैं।

आजादी के बाद भारत का संविधान बना तब लोगों को विश्वास था कि वन्दे मातरमफ राष्ट्रगान के रुप में ससम्मान जगह पाएगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसके बदले संविधान निर्माताओं ने रवीन्द्र नाथ टैगोर प्रणीत 'जन गण मन अधिनायक जय हे' को राष्ट्रगान के रुप में स्वीकार किया, जो ब्रिटिश सम्राट जार्ज पंचम की प्रशस्ति में लिखा गया था और सुभाष चन्द्र बोस ने जिसे जर्मनी में राष्ट्रगान के रुप में गाया था।

नमः शिवाय

ॐ का रहस्य

पंडित कैलाशनारायण
ज्योतिषाचार्य
उज्जैन, मध्य प्रदेश

(अ,उ,म)

ॐ कार के पहले वर्ण को ब्रह्मा कहते है अकार से उत्पन्न ये कलायें अकार ये माध्यम से ही विस्तार प्राप्त करती है ।

इनके नाम इस प्रकार है १. सृष्टिकला,२. मेधा,३. स्मृति, ४. ऋद्धि,५.कान्ति,६.लक्ष्मी, ७.धुति, ८.स्थिरा,९.स्थिति, और सिद्धि

अवर्ण से ही कवर्ग और चवर्ग कि उत्पत्ति होती है कवर्ग और चवर्ग मिलकर दस वर्ण होते है ।

ये वर्ण ही इन कलाओं के बीज वर्ण है अकार ओंकार का प्रथम वर्ण है अत ये वर्णऔर कलायें ब्रह्मा से उत्पन्न मानी जाती है ये सृष्टि कलायें है ।

ॐ कार दुसरा वर्ण उकार है उकार उन्मेष बीजहै उन्मेष मे स्थित कि तत्व विद्यमान रहता है अत उकार से १. जरा, २.पालिनी, ३.शान्ति, ४.ईश्वरी, ५.रति, ६.कामिका, ७.वरदान, ८.ह्लादिनी,९.प्रीति और दीर्घा, ये चवर्ग और चवर्ग से उत्पन्न है ट, त वर्गो या बीज उकार ही है । ये विष्णु से उत्पन्न कलायें मानी जाती है ।

ॐ का तीसरा वर्ण मकार है प्रथम बीज अ,ब्रह्मा, दूसरा बीज वर्ण उ विष्णु और यह तीसरा वर्ण मकार संहिति के देवतारूद्र कि वाचक वर्ण है मकार से उत्पन्न १० कला ये संहिति कहलाती है

वे इस प्रकार है १.तीक्ष्णा, २.रौद्री, ३.भयानक, ४.निद्रा, ५.चन्द्रा, ६.क्षुत, ७.क्रोधनी, ८. क्रिया,९.उत्कारी और १० मृत्यु इनके बीजवर्ण पवर्ग और जय वर्ग के है इन्हें मकार से उत्पन्न होने के कारण रूद्र जात भी कहते है। ये संहार कि दस कलाये है।

म,कार की संहिति कलाओ के भेद की चर्चा कि गयी है इसमे ध्यान देने की बात है कि मकार उपवर्ग का अन्तिम अनुनासिक वर्ण है इसके शेष चार वर्ण है–प,फ,ब,भी। इन वर्णो के रंग पीत, श्वेत, अरूण, और असित है पवर्ण पीत, ब अरूण, और भ, असित है।

इनकी कलाओं के नाम भी इसी प्रकार है जैसे पीता, श्वेता, अरुणा, और असिता ये ईश्वर से उत्पन्न है ॐ कि चतुर्थी अवस्था बिन्दु से ये निष्पन्न माने जाते है अर्थात् ईश्वर और बिन्दु दोनो उर्जा इसमे अनुस्यूत है।

इसलिए यह ओंकार वैदिक प्रणव कहलाता है।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

श्रीरामचरितमानस में सुन्दरकाण्ड की सुन्दरता

डॉ. शारदा मेहता
स्वतंत्र लेखन
ऋषिनगर विस्तार,
उज्जैन (म.प्र.)

श्रीरामचरितमानस में पाँचवें काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड है। अन्य काण्डों के नाम, स्थान विशेष के आधार पर रखे गए हैं यथा– बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किंधाकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड। पाँचवें काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड क्यों किया गया इस विषय में प्रबुद्ध विद्वानों में मत वैभिन्न हैं। इसमें श्रीराम के सुत तुल्य परमभक्त एवं सेवक श्रीहनुमानजी के विभिन्न सफल क्रियाकलापों का सविस्तार वर्णन किया गया है। सीतान्वेषण का महत्वपूर्ण कार्य हनुमानजी को सौंपा गया था। उन्होंने पूर्ण सफलता से, बुद्धि कौशल के आधार पर यह कार्य किया है। यहाँ महाकाव्य रामचरितमानस के कथानक की फलश्रुति पूर्णता की ओर अग्रसर होती दृष्टिगोचर होती है। ग्रन्थ में सुन्दरकाण्ड सर्वश्रेष्ठ अंश है।

त्रिकूट पर्वत जहाँ लंका स्थित है, इसके तीन शिखर हैं–

१. नील शिखर– इस पर लंका बसी हुई है।

२. सुबेल शिखर– यह मैदानी भाग है।

३. सुन्दर शिखर– जहाँ अशोक वाटिका है।

आदि कवि वाल्मीकिजी ने इसका प्रस्तुतिकरण इस प्रकार से किया है–

सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे सुन्दरः कपि। सुन्दरे सुन्दरी वार्ता अतः सुन्दर उच्यते।।

(मानस पीयूष–सुन्दरकाण्ड पृ. २३। गीता प्रेस गोरखपुर)

इस काण्ड में 'सुन्दर' शब्द का बारम्बार प्रयोग किया गया है–

१. *सिन्धु तीर एक भूधर सुन्दर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर।।*

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड १–३)

२. *स्याम सरोज दाम सम सुन्दर। प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर।।*

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. १०, चौ. २)

३. *तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम नाम अंकित अति सुन्दर।।* (श्रीरामचरितमानस सुन्दर. काण्ड दो. १३, चौ. १)

४. *कनककोट विचित्र मनिकृत सुन्दरायतना घना।*

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. २/छंद)

५. *सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा।*
लागि देखी सुन्दर फल रुखा।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. १७-४)

६. *सावधान मन करि पुनि संकर।*
लागे कहन कथा अति सुन्दर।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. ३३/२)

हनुमानजी जिस जिस पर्वत पर अपना पैर रखते हैं, वे सभी पाताल में चले जाते हैं। यह उनके असाधारण बल और शरीर सौष्ठव का प्रतीक है। एक आश्चर्यजनक सुन्दर घटना है। हनुमानजी का पथ निर्बाध हो जाता है। तत्पश्चात् सुरसा नामक राक्षसी से उनका सामना होता है। वह हनुमानजी का भक्षण करने के लिए अपने मुख का आकार बढ़ाती है, हनुमानजी भी बत्तीस योजन तक अपना स्वरूप बढ़ा लेते हैं। फिर अचानक बड़े सुन्दर और अद्‌भुत रूप से अपना स्वरूप अति सूक्ष्म करके उसके मुख में प्रवेश कर बाहर निकल जाते हैं। लंका में प्रवेश करते ही उन्हें लंकिनी नामक राक्षसी मिलती है। वह उन्हें अपना ग्रास बनाना चाहती है। हनुमानजी मुष्टि प्रहार से उसे रक्तरंजित कर देते हैं। वह सत्संग की सुन्दर व्याख्या करती है-

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. ४)

लंका में भीतर प्रवेश करते ही उनकी राम नाम का स्मरण करते हुए विभीषण से भेंट होती है। उसके द्वार पर श्रीराम के धनुष बाण अंकित दिखाई देते हैं। घर के बाहर तुलसीजी का सुन्दर चौरा है। हनुमानजी सोचते हैं कि निश्चित ही यह किसी सज्जन का घर है। यह सम्पूर्ण परिदृश्य हनुमानजी के मन में सुन्दर अनुभूति प्रदान करता है। सुन्दरकाण्ड का सम्पूर्ण कथानक ही सुन्दर है। जहाँ भी हनुमानजी जाते हैं श्रीराम की कृपा से उन्हें पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त होती जाती है। कहीं भी वे असफल नहीं हैं। अशोक वाटिका में त्रिजटा और सीताजी की अंतरंग मित्रता है। त्रिजटा हर संकट की घड़ी में सीताजी के साथ है। अशोक वाटिका में रावण तथा राक्षसियों से दुःखी होकर सीताजी त्रिजटा से चिता बनाने का कहती है जिसमें वह आत्मदाह करना चाहती है। बड़े सुन्दर और आत्मीय भाव से त्रिजटा कहती है-

निसि न अनल मिली सुनु सुकुमारी।
अस कहि सो निज भवन सिधारी।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा १२/३)

एक पुत्री को माता द्वारा जिस प्रकार समझाया जाता है वैसे ही त्रिजटा सीताजी को समझाती है। महाकवि तुलसीदासजी अपने शब्द कौशल से इस दृश्य को मार्मिक और सुन्दर बना देते हैं। इसके पश्चात शोक मग्न अकेली बैठी सीताजी के सामने हनुमानजी अँगूठी गिराते हैं। प्रथम तो वे उसे अंगार समझती हैं फिर उस पर सुन्दर रूप से अंकित राम-नाम लिखा देखती हैं। वे पहचान जाती हैं कि यह श्रीरामजी की मुद्रिका है। हनुमानजी कहते हैं-

सुवर्णस्य सुवर्णस्य सुवर्णस्य च मैथिली।
प्रेषितं रामचन्द्रेण सुवणस्यांगुलीयकम्।।

(हनुमन्नाटक ६-१५)

अर्थात् सुन्दर वर्ण वाले (रामनामाक्षर) युक्त सुवर्ण (दस माशे) की यह सुवर्ण की अँगूठी श्रीराम ने तुम्हारे लिए भेजी है।

अशोक वाटिका में क्षुधापूर्ति करने के पश्चात् वहाँ के रक्षकों का हनुमानजी के साथ मुष्ठिका प्रहार होता है। मध्यस्थता करने के लिए रावण पुत्र अक्षय कुमार आया। हनुमानजी ने उसका वध कर दिया। तब मेघनाद आया। हनुमानजी को ब्रह्मास्त्र से मारने का प्रयत्न किया। ब्रह्मास्त्र की महिमा को संरक्षित रखने के लिए हनुमानजी मूर्च्छित हो गए। उन्हें बाँध कर रावण के दरबार में ले जाया गया। सभा में यह निर्णय लिया गया कि कपि की ममता पूँछ पर होती है इसलिए वस्त्र बाँधकर पूँछ में आग लगा दी जाए। सम्पूर्ण लंका नगरी का तेल तथा वस्त्र समाप्त हो गए। पूँछ बढ़ती गई। उसमें आग लगाने पर हनुमानजी सम्पूर्ण लंका में घूमे। विभीषण के घर को छोड़कर सारी लंका जल गई। सर्वत्र भय का वातावरण व्याप्त हो गया। हनुमानजी आग बुझाने के लिए समुद्र में कूद पड़े। निम्न तत्वों ने हनुमानजी की सहायता की-

१. पवनतत्व- उनचास पवन बहने लगे। जिससे आग ने प्रचण्ड रूप धारण किया।

२. आकाश- हनुमानजी अट्टहास करते हुए निकले।

३. पृथ्वी- पृथ्वी पर उन्होंने विशाल रूप धारण किया।

४. अग्नि- अग्नि में रहकर भी वे सुरक्षित रहे।

५. जल- अन्त में वे आग का शमन करने के लिए समुद्र में कूद गए।

हनुमानजी सीताजी के सम्मुख आकर खड़े होते हैं। सीताजी से श्रीराम को देने के लिए कुछ वस्तु माँगते हैं। सीताजी श्रीराम को निशानी के रूप में देने के लिए चूड़ामणि देती हैं और कहती हैं

शीघ्रतिशीघ्र श्रीराम मुझे लेने आ जाएं। फिर हनुमानजी समुद्र लाँघ कर उस पार पहुँचते हैं। उन्हें आया हुआ देखकर सभी अत्यधिक प्रसन्न होते हैं–

मिले सकल अति भये सुखारी तलफत मीन पाव जिमिबारी।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. २८–३)

श्रीराम और लक्ष्मण स्फटिक शीला पर विराजित हैं। हनुमानजी प्रसन्न वदन होकर उन्हें दण्डवत् करते हैं। सभी वानर समूह हर्षित हैं। बड़ा सुन्दर मनोहारी दृश्य है। जानकीजी की अशोक वाटिका में स्थिति तथा उनके द्वारा दिया गया सन्देश हनुमानजी सुनाते हैं–

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना। दीनबन्धु प्रनतारति हरना।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा ३०/२)

हनुमानजी सीताजी की मानसिक स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं–

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड ३० दोहा)

सीताजी ने हनुमानजी को श्सुतश कहा। श्रीराम ने भी उन्हें सुत कहा। यह सौभाग्य हनुमानजी को ही प्राप्त हुआ है। श्रीराम को सीताजी द्वारा दी गई निशानी चूड़ामणि उन्हें सौंपते हैं। श्रीराम सजल नयन होकर भावुक हो जाते हैं।

सुन्दरकाण्ड का सम्पूर्ण कथानक अति सुन्दर है। हनुमानजी की अप्रतिम रामभक्ति, स्वामी के प्रति उनका सेवाभाव, समुद्र को लांघ कर उनके द्वारा सीतान्वेषण करना, विभीषण और श्रीराम की मित्रता, शुक और सारण नामक दूतों का श्रीराम के सद्व्यवहार से प्रभावित होना आदि घटनाक्रम अवर्णनीय है। मानव मन को आन्दोलित करता है। सुन्दर है अतः इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड है–

सुन्दरे सुन्दरो रामरू सुन्दरे सुन्दरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे किम् न सुन्दरम्।।

(मानस पीयूष– सुन्दरकाण्ड पृ. २३ गीता प्रेस गोरखपुर)

सन्दर्भ ग्रन्थ–

१. श्रीरामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड गीता प्रेस गोरखपुर

२. मानस–पीयूष खण्ड ६ गीता प्रेस गोरखपुर

३. हनुमन्नाटकम् प्रकाशक–चौरवम्बा विद्याभवन वाराणसी २२१००१

शिवोहम

डॉ. सन्तोष खन्ना
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

तुम्हारा स्वर्णिम प्रकाश
छू जो गया मेरा मानस
गूंज रहा है भीतर बाहर
शिवोहम शिवोहम।
गा रही वसुंधरा
शिवोहम शिवोहम
गुंजा रहा गगन
शिवोहम शिवोहम
थिरक रहा पवन
शिवोहम शिवोहम
गूंजा रहा कण
शिवोहम शिवोहम
गा रहा कैलाश
शिवोहम शिवोहम
कैलाश पर प्रकाश
शिवोहम शिवोहम
गाती है सरगम
शिवोहम शिवोहम
थिरकते कदम
शिवोहम शिवोहम
दे रहा डमरू ताल
शिवोहम शिवोहम
बज रही मृदंग
शिवोहम शिवोहम
गा रहे नटराज
शिवोहम शिवोहम
बहती गंग धार
शिवोहम शिवोहम
गा रही जटायें
शिवोहम शिवोहम
नदियां पहाड़
शिवोहम शिवोहम
हैं हम शिवोहम,
शिवोहम शिवोहम।
ऊँ नमो शिवाय

सांस्कृतिक क्षरण का प्रतिफल है

विवाह विच्छेद

डॉ. साधना गुप्ता
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
झालावाड़, राजस्थान

आज समाज में प्रत्येक व्यक्ति परेशान है,–अकेलेपन से। विज्ञान ने विश्व ग्राम की संकल्पना को भले ही सार्थक कर दिया हो परन्तु ग्राम्य जीवन की आत्मीयता के भाव कहीं खो गए हैं। दर्द हल्का करने वाला कन्धा और गोद दोनों का अभाव सा हो गया है। ऐसे में दाम्पत्य सम्बन्धों की रसमयता भी सूख गयी और उसका स्थान ले लिया अधिकारों ने। स्वत्व की प्रतिस्पर्धा में छिन्न– भिन्न होते सम्बन्ध और चरमराते पारिवारिक ढ़ाचे का मूल कारण क्या है? इसी की खोज करने का प्रयास हमारा यह आलेख है। तो आइए रु–ब–रु होते हैं उन कारणों से – अपनी भाषा एवं संस्कृति का परित्याग – किसी भी समाज की भाषा केवल सम्प्रेक्षण का माध्यम नहीं होती। वह भाषा उस मानव समाज की संस्कृति की वाहक भी होती है जो अपने साथ समूची सांस्कृतिक परम्परा को साथ लेकर चलती है। यही कारण है वह हमें अनायास ही जीवन जीने का पाठ भी पढ़ा देती है परन्तु आज हम अपनी भाषिक क्षमता और सांस्कृतिक निधियों को तिलांजलि देकर पाश्चात्य भाषा को अपना रहें है और साथ ही पाश्चात्य मूल्यों को भी अपनाने के फलस्वरूप यक्ति और समाज मानवीय मूल्यों से छिटक जिस यंत्रचालित परिवेश में आ खड़ा हुआ है वहाँ हमारी मेधा स्वार्थ के चमकीले आच्छादन से आच्छादित परमार्थ तो बहुत दूर की बात है, परसत्ता तक को स्वीकार करने को तैयार नहीं है। ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति मानव ने उस ईश्वर की सत्ता को अस्वीकार कर दिया है तो फिर संयुक्त परिवार को स्वीकार करने की, परस्पर त्याग करने की भावना का लोप हो जाना स्वाभाविक है।

एकल परिवार में एकल सन्तान– आज 'एकल परिवार में एकल सन्तान' ने 'एक तो करेला, दूजा नीम चढ़ा' की कहावत को पूर्णतः चरितार्थ कर दिया। स्वार्थ के अतिरिक्त कुछ नजर ही नहीं आता, तब स्वयं के अतिरिक्त अन्य के अधिकार का तो प्रश्न ही नहीं उठता ?

शर्तिया विवाह – तत्पश्चात् परिपक्व उम्र में दहेज के आधार पर शर्तिया शादी? निश्चित ही प्रेम, समर्पण, विश्वास से संयुक्त सात जन्मों का साथ तो कदापि नहीं हो सकती। तब शादी 'यूज एंड थ्रो' का पर्याय बनती जा रही है। ऐसे में परस्पर प्रतिस्पर्धा की भावना पति–पत्नी को जीवनसाथी कम, प्रतिद्वंद्वी ही अधिक बना रही है, जिसका परिणाम विवाह विच्छेद (तलाक) के रूप में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है।

इसके लिए एक व्यक्ति नहीं समूचा समाज जिम्मेदार है। आज हमनें जिस संस्कृति को अपना लिया है ,उसमें यह सामान्य बात है । फिर हम इतने चिंतित क्यों है? 'बोया पेड़ खजूर का आम कहां से पाए'? हम पाश्चात्य संस्कृति का पाठ पढ़ा कर भारतीय संस्कारों की आशा क्यों कर रहे हैं? सत्य ही हमने चिंतामणि छोड़ कर कांच को अपना लिया है ।

उपाय– यह लाईलाज हो, ऐसा कदापि नहीं है। यदि हम पुनः अपनी भाषा की ओर लौटें तो संस्कृति स्वतः ही समाज का संस्कार कर देगी। क्योंकि भाषा मे निहित भाव उन शब्दों को मंत्र बना देता है और उसके द्रष्टा को मंत्र द्रष्टा। जैसे जड़ में लगी दीमक को विनष्ट कर देने से पत्र–पुष्प स्वतः ही प्रफुल्लित हो उठते हैं उसी प्रकार हम अपनी भाषा को अपना लें तो निश्चित ही हमारी सांस्कृतिक विरासत हमारे जीवन को पुनः प्रफुल्लित कर देगी। तो आइए अभी भी वक्त है – कहा भी गया है,– जब जागो तभी सवेरा ।

मितभाषिता

सीताराम गुप्ता
पीतम पुरा, दिल्ली

हमेशा ऊर्जस्वित व कर्मशील बने रहने के लिए हमें कम व सोच–विचार करने के उपरांत ही बोलना चाहिए

डॉक्टर रोगी को विशेष रूप से अत्यधिक कमजोर अथवा गंभीर रोग से ग्रस्त व्यक्ति को बोलने से मना करते हैं। कई आधुनिक अस्पतालों ने तो रोगियों से मिलने का समय ही निश्चित कर रखा है और मरीजों के पास ज़्यादा देर तक रुकने की मनाही भी कर रखी है। मिजाजपुर्सी के लिए आना और मरीज से बातें करना व उसको दिलासा देना उसके हित में ही होता है फिर क्यों डॉक्टर बाहरी लोगों को मरीज से मिलने और मरीज के बोलने पर पाबंदी लगाते हैं? कारण स्पष्ट है। बोलने से रोगी थक जाता है क्योंकि बोलने में ऊर्जा व्यय होती है। रोगी की ऊर्जा का स्तर वैसे ही कमजोर होता है अतः जब वो अधिक बोलेगा तो उसकी शेष ऊर्जा भी नष्ट हो जाएगी। ऊर्जा हमारे काम करने में ही नहीं रोगमुक्ति व उपचार में भी सहायक होती है। यदि रोगी शांत रहेगा तो उसकी ऊर्जा रोगमुक्ति व उपचार की दिशा में प्रवाहित होकर उसे अपेक्षाकृत शीघ्र स्वस्थ करने में सहायक होगी।

प्रश्न उठता है कि क्या स्वस्थ व्यक्ति के बोलने से उसके स्वास्थ्य पर भी कोई दुष्प्रभाव पड़ता है? बोलना एक स्वाभाविक बात है लेकिन हर चीज की एक सीमा होती है। बोलने की भी एक सीमा होनी चाहिए। सभी का मानना है कि न तो अधिक बोलना ही श्रेयस्कर होता है और न बिल्कुल चुप रहना ही उत्तम होता है इसलिए एक स्वस्थ व्यक्ति भी कम बोले तो अच्छा है। इसके कई कारण हैं। पहला तो यही कि बोलने में ऊर्जा व्यय होती है। यदि हम अपनी सारी ऊर्जा बोलने में ही व्यय कर देंगे तो काम करने के लिए ऊर्जा बचेगी ही नहीं। दूसरे हम जितना ज्यादा बोलते हैं गलत अथवा निरर्थक बोलने की संभावना बढ़ जाती है। जो ज्यादा बोलते हैं उन्हें सोचने का वक्त नहीं मिल पाता या कह सकते हैं कि जो सही बोलने के लिए सोचने की जहमत नहीं उठाते वे लोग ही ज्यादा बेकार की बक–बक करते हैं।

जो लोग जितना कम बोलते हैं जीवन में प्रायः अधिक संतुलित रहते हैं। जो लोग जितना ज्यादा बोलते हैं जीवन में उतना ही कम कर पाते हैं। उनकी करनी और कथनी में बहुत अंतर रहता है। सीधी सी बात है यदि हम बोलते ही रहेंगे तो काम कब करेंगे। यदि बोलने में ही सारी ऊर्जा नष्ट कर डालेंगे तो कार्य करने के लिए ऊर्जा बचेगी ही नहीं। जो लोग बहुत अधिक बोलते हैं गलत बोलने की संभावना भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती है। ऐसे लोग उचित विचार करने के उपरांत सही–सही बोलने की बजाय जो कुछ मुंह में आए बकने लगते हैं। ऐसे व्यक्तियों की विश्वसनीयता समाप्त हो जाती है। लोग उनसे दूर भागने में ही अपनी भलाई समझते हैं। ऐसे लोग सही लोगों से कटकर बेकार लोगों के संपर्क में रह जाने को विवश होते हैं। इसका ये अर्थ नहीं कि हम अन्याय को चुपचाप सहन कर लें अथवा अपने आसपास गलत होता देखकर भी नजरें फेर लें और मुँह पर ताला लगा लें। हमें अन्याय का विरोध करना चाहिए और सही बात हर हाल में अवश्य कहनी चाहिए। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि हम ऊर्जस्वित व कर्मशील बने रहें तथा मनसा वाचा कर्मणा संतुलित बने रहें व हमारी करनी और कथनी में अंतर न हो तो हमें सोच–विचार करने के उपरांत ही बोलना चाहिए। कम बोलने के साथ–साथ सार्थक व उपयोगी विषयों पर बोलना भी हमारे हित में ही होगा।

हनुमान कौन ?

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उ.प्र.

ज्योतिषीय गणना के अनुसार चौत्र पूर्णिमा को हनुमान जी का जन्म हुआ था। इनके पिता सुमेरु पर्वत के राजा वानर राज केसरी थे एवं माता अंजनी थी। हनुमान जी को पवन पुत्र के नाम से भी जाना जाता है। राजस्थान के सालासर व मेहंदीपुर धाम में इनके भव्य व विशाल मंदिर है ।

इस धरा पर जिन सात मनीषियों को अमरत्व का वरदान प्राप्त है उनमें पवन पुत्र हनुमान जी भी हैं। हनुमान जी रुद्र का ग्यारवा अवतार हैं। जो भगवान राम की सहायता के लिए अवतरित हुए थे। हनुमान जी का मुख्य अस्त्र गदा है। सूर्य और चंद्र उन्हें राम की सहायता के लिए दिए गए थे ।

मंगलवार का दिन हनुमान जी के लिए विशेष दिन है । इस दिन हनुमानजी की उपासना से उनकी विशेष कृपा प्राप्त होती है। हनुमान जी को केवड़े का इत्र एवं लाल गुलाब की माला विशेष प्रिय है। जो मंगलवार को उन्हें अर्पित किया जाता है।

हनुमान जी के जन्म के विषय में एक कथा प्रचलित है। अयोध्या के राजा दशरथ पुत्र प्राप्ति के लिए पुत्रेष्ठी यज्ञ कर रहे थे। हवन समाप्ति के बाद गुरुदेव ने प्रसाद की खीर तीनों रानियों में बांट दी, खीर में से कुछ अंश एक कौवा उठा ले गया और जहां अंजना माई तपस्या कर रही थी वहां गिरा दी। तपस्यारत अंजना के हाथ में जब खीर गिरी तो वे उसे शिव का प्रसाद समझ कर खा गई। इसी प्रसाद से हनुमान जी का जन्म हुआ।

हनुमान जी राम के भक्त थे इसी कारण राम की मूर्ति के समक्ष 108 बार राम नाम जप करने से हनुमान जी का आशीष प्राप्त होता है। हनुमान जी बल बुद्धि विद्या के दाता हैं एवं अजर अमर व महाबली हैं। हनुमान जी के 12 चमत्कारी नाम है जिन्हें पढ़ने या जाप करने से संकटों से मुक्ति व सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। यह नाम इस प्रकार हैं: ;

1. हनुमान, 2. अंजनी सुत, 3. वायुपुत्र, 4. महाबली, 5. रामेष्ठ, 6, फाल्गुण सखा, 7.

पिंगाक्ष, 8. अमित विक्रम, 9. उदधिक्रमण, 10. सीता शोक विनाशन, 11. लक्ष्मण प्राण दाता, 12. दशग्रीव दर्पहा ।

हनुमान जी की साधना करने वाले साधकों में सूर्य तत्व अर्थात आत्म विश्वास ओज व तेजस्विता स्वतः ही आ जाते हैं। हनुमान जी के जन्म के अनेकों कारणों में एक यह भी माना जाता है कि वह अपनी माता अंजनी के श्राप को हरने के लिए पैदा हुए थे हनुमान जी की कुछ विशेषताएं हैं ;

1. भगवान राम की लंबी उम्र के लिए सीता जी अपनी मांग में केसरिया सिंदूर लगाती हैं, यह जानकर बजरंगबली अपने पूरे शरीर में सिंदूर लगाने लगे।

2. हनु का अर्थ है चपटी और चौड़ी हड्डी । इसी कारण उनका नाम हनुमान पड़ा ।

3. आदि कवि वाल्मीकि से पहले ही हनुमान जी ने अपने नाखूनों से हिमालय के पहाड़ों पर रामायण लिख डाली जब बाल्मीकि जी को यह पता चला तो वे उसे पढ़ने के लिए हिमालय पर गए ।

4. अधिकांश लोग हनुमान जी को ब्रह्मचारी समझते हैं। लेकिन सूर्य देव की शिक्षा की शर्त के कारण उन्हें सुवर्चला नामक स्त्री से विवाह करना पड़ा ।

5. मकरध्वज नाम का उनका बेटा उनके पसीने की बूंद से उत्पन्न हुआ था ।

6. राम भक्त हनुमान के भाई भीम थे क्योंकि वह भी वायु पुत्र थे ।

7 . संस्कृत में हनुमान जी के 108 नाम हैं और हर नाम उनके जीवन के अध्यायों का सार बताता है ।

8. प्रभु राम जानते थे कि हनुमानजी उनकी मृत्यु को स्वीकार नहीं कर पाएंगे इसलिए उन्होंने ब्रह्मा जी की सहायता से हनुमान जी को पहले पाताल लोक भेजा फिर सरयू में गुप्तार घाट में समाधि ली।

9. जब सीता मां ने उन्हें कीमती हार भेंट किया तो हनुमान जी ने उसे लेने से मना करते हुए अपना सीना चीर कर अगाध भक्ति व प्रेम का प्रमाण प्रस्तुत कर दिया ।

10. हनुमान जी इस धरा पर एक कल्प तक सशरीर रहेंगे। ऐसे साक्ष्य अनेकों ग्रंथों में मिलते हैं ।

11. प्रभु राम को हनुमान जी ,श्यमूक पर्वत के पास मिले थे ।

12. बाल्मीकि रामायण के अनुसार लंका में समुद्र तट पर अरिष्ट नामक पर्वत है जिस पर चढ़कर हनुमान जी ने एक छलांग में ही समुद्र पार किया था ।

13. हनुमान जी रुद्र का 11वां अवतार हैं, उनके हृदय में राम सीता व लक्ष्मण विराजते हैं, जो विष्णु लक्ष्मी वह शेषनाग के अवतार हैं। इसलिए हनुमान जी की आराधना से एक साथ विष्णु–शिव–शेष व लक्ष्मी की उपासना स्वतः ही हो जाती है ।

हनुमान जी महाभारत में दो बार दिखते हैं। पहली बार वे जंगल में भीम से मिलते हैं, और दूसरी बार वे महाभारत युद्ध में अर्जुन के रथ के ध्वज पर सवार होते हैं ।

हनुमान जी के पांच सगे भाई थे इसका उल्लेख ब्रह्मांड पु. राण में मिलता है इनके नाम क्रमशः गतिमान, श्रुतिमान, केतुमान, गतिमान, धृतिमान थे। इन सभी की संताने भी थी ।

माना जाता है की हनुमान जी का जन्म एक करोड़ पच्चासी लाख अड्डावन हजार एक सौ पन्द्रह वर्ष पहले त्रेता युग के अंतिम चरण में चौत्र पूर्णिमा को मंगलवार के दिन सुबह 6:30 बजे अंजन नामक छोटे से पहाड़ी गांव में हुआ था ।

हनुमान जी के अनेक अवतार हैं रुद्र के ग्यारहवें रूप में वे हनुमान हैं, वे शिव भी हैं । इसके अलावा हनुमान जी का पंचमुखी अवतार भी है। इस विराट रूप में वे पांच दिशाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं प्रत्येक स्वरूप में एक मुख, त्रिनेत्र व दो भुजाएं हैं । इन पांच मुखों में नरसिंह, गरुड, अश्व, वानर और वराह रूप है ।

रामावत वैष्णव धर्म के विकास के साथ हनुमान जी का भी दैवीकरण हुआ। धीरे–धीरे हनुमान अथवा मारुति पूजा का एक संप्रदाय ही बन गया ।

चल हंसा उड़ चल वहाँ

डॉ. निशा नंदिनी भारतीय
तिनसुकिया, असम

चल हंसा उड़ चल वहाँ,जहाँ मेरे पी का देश।
बहती नदिया की धार जहाँ, स्वर्ग सा सुंदर भेष।
चल हंसा उड़ चल वहाँ.....।

झाँक रहा तू हर प्राणी में
क्यों न झाँके अपने मन में।
ज्ञान चक्षु से देख ले सृष्टि
ढोए कब तक मैली गठरी।
चल हंसा उड़ चल वहाँ.....।

आवागमन के फेरे में तू
भूल गया तू जीवन सत्य।
अहंकार की चादर ओढ़े
कौड़ी–कौड़ी तू रे जोड़े।
चल हंसा उड़ चल वहाँ.....।

राजपूत की शरण

आनंदप्रकाश जैन
मुंबई

भारत के राजपूतों के गौरव की यह एक कहानी है। उनमें अपनी आन पर मर मिटने की वह साध थी, जिसके लिए अपनी जान पर भी खेल जाना, वे हंसी–खेल समझते थे।

ऐसी ही एक घटना मेवाड़ के राजा संग्रामसिंह के साथ घटी थी। बाद में लोग उन्हें राजा सांगा के नाम से पुकारने लगे। एक बार उन्होंने मेवाड़ की गद्दी के दावेदार, अपने दोनों भाई, पृथ्वीराज और जयमल से छिप कर, देवी चारुणी के मंदिर वाली पहाड़ियों में बसेरा ले रखा था। एक दिन अचानक उनके भाइयों ने उन पर धावा बोल दिया। संग्रामसिंह नहीं चाहते थे कि उन्हें अपने भाइयों के खून से अपने हाथ रंगने पड़ें। इसलिए उन्होंने अपने घोड़े की लगाम थामी और वहां से भाग लिए। पृथ्वीराज को तो उनका पता नहीं चला, पर जयमल ने उनका पीछा किया। संग्रामसिंह ने अपना घोड़ा सरपट दौड़ाया। मगर जयमल ने उनका पीछा ना छोड़ा। जब संग्रामसिंह ने देखा कि कुछ ही देर में उनकी भिड़ंत होनी निश्चित है, देवी चारुणी के मंदिर के पास पहुंच उन्होंने आगे बढ़ने का विचार छोड़ दिया। वह थक कर चूर हो, घोड़े से लगभग गिर ही पड़े।

उस मंदिर का पुजारी एक राठौर राजपूत था। उनका यह धर्म होता है कि एक बार यदि शत्रु भी उनकी शरण में आ जाए, तो वे हर कीमत पर उसकी रक्षा करते थे। पुजारी की नसों में भी राजपूत का खून बह रहा था। उसने तुरंत उन्हें मंदिर के अंदर खींचकर, भीतर का दरवाजा बंद कर दिया। तलवार हाथ में लेकर वह सामना करने को तैयार था। इतने मे धूल और पसीने से लथपथ जयमल का घोड़ा मंदिर के आंगन में आकर ठहर गया। उसने पूछा, ''क्या यहां मेरे भाई संग्रामसिंह जी आए थे?''

निडर होकर पुजारी ने उत्तर दिया, ''हां, एक बहादुर राजपूत आया तो था। लेकिन इस समय वह मंदिर की शरण में हैं। मैं इस मंदिर का पुजारी हूं। जब तक मेरे शरीर में दम और हाथ में खड्ग है, तब तक उनकी रक्षा करना मेरा धर्म है।''

जयमल ने देखा कि मंदिर का कक्ष बहुत छोटा और संकरा था, दरवाजा साधारण सींखचों का बना था। वह अपने घोड़े से नीचे उतरा। अपनी लंबी तलवार से वह सींखचे तोडने

के लिए तैयार हो गया।

इस पर पुजारी ने कहा, ''ठहरो, राव जू! मंदिर की पवित्र भूमि पर खून गिराने की जरूरत नहीं। जब तलवार सामने हो, तो राजपूत छल से वार नहीं करते। आप पहले मुझ से निपट लीजिए। इसके बाद जो जी में आए, कीजिए।''

जयमल मंझा हुआ खिलाड़ी था। उसके सामने पुजारी का ज्यादा देर टिकना संभव न था। वह दया–दृष्टि से पुजारी की ओर देखकर बोला, ''आप बूढ़े और कमजोर हैं, पुजारी जी। राजपूत कमजोरों और स्त्रियों पर हाथ नहीं उठाते। मजबूर न करें। मुझे अपने धर्म का पालन करने दें। अलग हट जाएं।''

पुजारी ने हंसते हुए कहा, ''राजपूत कभी बूढ़ा नहीं होता। जब तक उसकी आत्मा में बल है, वह कभी कमजोर नहीं होता।''

जयमल सकते–से में खड़ा रहा। हताश होकर बोला, ''ठीक है। आप और मैं अपने–अपने धर्म का पालन करते हैं। फिर जो भगवान एकलिंग की इच्छा!''

दो पैंतरों में ही वह पुजारी की गरदन धड़ से अलग कर सकता था। लेकिन उसने देखा पुजारी डटा रहा था। समय बीतने के साथ–साथ जयमल का क्रोध बढ़ता जा रहा था। पुजारी भी नई शक्ति जुटाकर फिर भिड़ पड़ता था।

फिर जयमल ने जो अंतिम प्रहार किया, तो पुजारी भूमि पर गिर पड़ा। वह मरते–मरते बोला, ''राव जू, मै आपको पहचानता हूं। आप राव जयमल जी हैं। राव संग्रामसिंह जी कों थोड़े–से विश्राम की आवश्यकता थी। उन्होंने कर लिया। अब मैं उन्हें देवी की शरण में छोडता हूं। अगर आपने देवी की मूर्ति पर अपने या उनके खून के छींटे पड़ने दिए, तो देवी का कोप लगेगा। तब आप दोनों में से कोई भी मेवाड़ की गद्दी पर नहीं बैठ पाएगा. . .।'' इन अंतिम शब्दों के साथ–साथ पुजारी ने प्राण त्याग दिए।

जयमल द्वार पर डट कर खड़ा हो गया। कुछ ही देर बाद संग्र. ामसिंह पूजाघर से बाहर निकल आए। उन्होंने जयमल की ओर देखा तक नहीं। पुजारी के पास आकर उन्होंने उसके रक्त से अपने माथे पर तिलक लगाया, और घूम कर जयमाल से बोले, ''तुमने सुना, जयमल! मैं इस वीर पुरुष की अंत्येष्टि करके ही तुझ से दो–दो हाथ कर पाऊंगा। हां, तुझे मेवाड़ की गद्दी पाने की इतनी ही जल्दी है, तो में निहत्था भी तुझ पर भारी पड़ूंगा!''

संध्या घिर आई थी। यह भी राजपूतों की आन ही थी कि न वे निहत्थों पर वार करते थे, न संध्या हो जाने पर अपने शत्रु पर। जयमल ने भाई के साथ मिल कर पुजारी का दाह–संस्कार किया। रात भर में उसके मन में भाई के प्रति न जाने कैसे भाव जागे कि सुबह को वह संग्रामसिंह को सोता छोड़, अपने घोड़े पर सवार हो, वापस उदयपुर की ओर दौड़ गया।

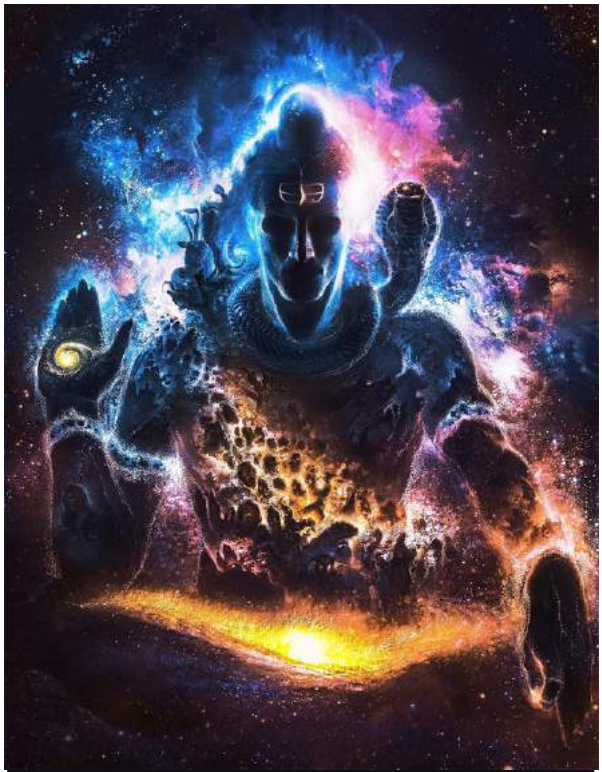

देवों के देव महादेव

डॉ. सुमन मिश्रा
झांसी

हे गिरजा पति नाथ उमापति, तात तुम्हें नित वंदन मेरा।
फूल चढा कर दीप जलाकर, दास करे अभिनंदन तेरा।।
शीश शमी प्रभु और कुशोदक,नाथ मुझे अबलंवन तेरा।
हे करुणाकर हे गुनआगर , दूर करो तम बंधन मेरा।।

शैल सुता उर में बसते प्रभु ,भक्त कहें सब दीनदयाला।
अंग विभूति रमी जिनके तन, सोहत है उर पै मणिमाला।।
नृत्य करें डमरूधर हैं शिव , पीवत है हर नित्य सुहाला।
हाथ कमंडल संग उमापति, मध्य विराजत है शिवि लाला।।

शीशजटा अरु चंद्र अलौकिक,और सजी कटि पै मृगछाला।
मुंडन माल सुशोभित है हिय, पावन है हर रूप निराला।।
ताप विमोचन हे त्रिलोचन, शोभित है कर में प्रभु भाला।
शीश धरूँ उनके पद पंकज, पान करें हर जो नित हाला।।

दुःख को स्वीकार मत करो

जीवन के आनंद सुख–दुःख दोनों

सुरेन्द्र अग्निहोत्री
लखनऊ

सुख और दुःख में निरपेक्ष भाव ही जीवन के आनंद के परम लक्ष्य को पाने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।सुख आते ही खुशी से उछलना ओर दुख आते ही निराशा के सागर में डूब जाना मानव का स्वाभाव है। मन के गहरे अंधियारे में से उजाले की राह पर चलने के लिए 'क्या मेरा क्या तेरा अपना, सारा जग झूठा सपना' मान कर चलना होगा। दुःख का समर्थन करने वाले कहते हैं–थोड़े गम हैं, थोड़े सुख हैं, यह दुनिया है। सुखी रहने के लिए क्या करे, क्या न करे यह प्रश्न हर किसी को परेशान किए है, स्वस्थ रहने के लिए केवल शरीर का रोगमुक्त होना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु शरीर में ऐसी स्थिति होना भी आवश्यक है कि उसका मन और मस्तिष्क भी किसी प्रकार से प्रभावित न हो। संस्कृत में औषध का अर्थ है जो दोष को काटे वह औषधि और जो गुण का आधान करे, इस तरह से विघ्न दूर करने के लिए औषधि का सेवन करना चाहिए। अपनी मान्यता के अपनी कल्पना के सिवाय दूसरा कोई सुख –दुःख देने वाला नहीं है। कोई भी बात बोलने से पहले तीन बार उसे मन में दोहराओ। उसके परिणाम पर दृष्टि जाने पर बोलने योग्य है या नहीं, मालूम पड़ जाएगा। मीठा बोलो नहीं तो चुप रहो। कटु बोलने की अपेक्षा न बोलना अच्छा है। सुख का अस्वादन करने के लिए उसे बांटिए। आप सुख का वितरण कीजिए और आप पाएंगे कि आप का अंतःकरण सुख के उद्गम का स्रोत हो जाता है। गांधी जी कहते है तीन काम करो –धीरज रखो, विश्वास रखो, और कभी निराश मत हो। सुखी रहने के लिए, शान्त रहने के लिए मनुष्य को एक ही दिशा मे विचार नही करना चाहिए। बुद्ध कहते हैं कि पाप के फल से बचो मत। उसे निष्पक्ष भाव से भोग लो। तुमने कुछ किया, अब उसका दुःख आया, इस दुःख को तटस्थ भाव से भोग लो। अब आनाकानी मत करो। अब बचने का उपाय मत खोजो क्योंकि बच तुम न सकोगे। बचने की कोशिश में तुम ... तुम्हारे पंख बन्धे रहेंगे जमीन से। तुम आकाश की तरफ यात्रा न कर सकोगे। मृत्यु से भी बचने का कोई उपाय नहीं है इसलिए बचने की चेष्टा छोड़ो। जिससे बचा न जा सके, उससे बचने की कोशिश मत करो। उसे स्वीकार करो । स्वीकार बड़ी क्रान्तिकारी घटना है। प्रत्येक प्राणी की यही कामना है कि सुख मिले। सुख प्राप्ति के लिए अनेक प्रयास करता है किंतु उसे सुख नहीं मिलता। अकसर लोग दुखों की चर्चा में ही समय बीता देते हैं और अवसर हाथ से निकल जाता है। अस्वीकार में दुख और स्वीकार में सुख। अपने जज़्बातों को इस चक्रव्यूह में संभाल कर एक अभेद्य दीवार जिसके भीतर झांकने की सबको मनाही हैं के पार जाने की राह परम लक्ष्य है। दुःख को इंकार मत करो उसको स्वीकार करना सीखो क्योंकि इंकार में दुख है। भौतिकता भी एक दृष्टि है और आध्यात्मिकता भी एक दृष्टि है। दुःख चाहे किसी भी निमित्त से हो, वह अपने हृदय में ही होता है। यह डंडे या गाली में नहीं होता। सर्दी–गर्मी में नहीं होता।

दुश्मन में भी नहीं होता। बाहर नही होता, अपने मन में होता है। इसे स्वीकार मत करो। जीवन में दुःख से बचने हेतु दुःख को दुःख के रूप में ग्रहण मत करो, दुःख को स्वीकार मत करो। सुखी जीवन के लिए इस से बड़ा कोई भी आधार नहीं है। अपने दुःख में रोनेवाले ! मुस्कराना सीख ले। औरों के दुःख–दर्द में आँसू बहाना सीख ले। नानक कहते हैं, उपाय एक ही है कि उसके हुक्म और उसकी मर्जी के अनुसार सब उस पर छोड़ दो। जैसा वह जिलाए, जीयो। जैसा वह कराए, करो। जहां वह ले जाए, जाओ। उसका हुक्म तुम्हारी एक मात्र साधना हो जाए। तुम अपनी मर्जी हटाओ। उसकी मर्जी को आने दो। तुम स्वीकार कर लो जीवन जैसा हो। परमात्मा ने दिया है, वही जाने। तुम इंकार मत करो। दुःख आए तो दुःख को भी स्वीकार कर लो कि उसकी मर्जी। और अहोभाव रखो, धन्यभाव रखो कि अगर उसने दुःख दिया है तो जरूर कोई राज होगा, कोई अर्थ होगा, कोई रहस्य होगा। तुलसीदासजी ने कहा है– तुलसी इस संसार में, सुख–दुःख दोनों होय। ज्ञानी काटे ज्ञान से, मूरख काटे रोय।। सुख–दुःख में सुखी–दुःखी होना भोग है और सुखी–दुःखी न होकर सम रहना योग है। *'समत्वं योग उच्यते'* (गीता २।४८) अर्थात् जिस किसी तरह अपने में समता और निर्लिप्तता आनी चाहिए। ... गांधारी के शाप को हंसते–हंसते स्वीकार करना ... शोक मत करो। प्रतिदिन युद्ध के लिए जाने से पूर्व जब तुम्हारा पुत्र दुर्योधन तुमसे आशीर्वाद लेने आता था और कहता था कि मां मैं युद्ध के लिए जा रहा हूँ, तुम मेरे कल्याण के लिए आशीर्वाद दो, तब तुम सदा यही उत्तर देती थीं *'यतो धर्मस्ततो जयः'* अर्थात् धर्म की जय हो।'

मेरा प्यारा हिंदुस्तान

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
उत्तर प्रदेश

जिसके शान को दुनिया में, मिली एक अलग पहचान,
हम उस देश के रहने वाले, वो हमारा प्यारा हिंदुस्तान।
देश की मिट्टी सोना उगले, जहाँ मिले सद्गुणों की खान,
प्राणों से वो प्यारा देश, हम सदा करें जिसका गुणगान।।

सद्भावना समरसता का, प्रतिमान रहा जहाँ विशेष,
धरती को हम माँ जैसा माने, वो हमारा भारत देश।
जान न्यौछावर करने को, तत्पर रहते यहाँ देशभक्त,
प्यार और मानवता का, सदैव गूँजता रहता संदेश।।

जहाँ जाति पाति मजहब के, पालन का न प्रतिबंध,
कानून से देश चलाने को, जहाँ संविधान में अनुबंध।
तानाशाही यहाँ न होकर, फलित जहाँ पर लोकतंत्र,
जनता की ही चले हुकूमत, जनसेवक ही करे प्रबंध।।

सत्य व अहिंसा भारतवर्ष में, सदैव रहा जहाँ बलवान,
मानव गरिमा का ख्याल रखें, झुकने न दें स्वाभिमान।
अपने देश के आन की खातिर, हम मर मिट सकते हैं,
इस राष्ट्र के कण कण में मिले, देशभक्ति के निशान।।

उत्तर से लेकर दक्षिण तक, फैला प्रकृति का उपहार,
हिंदू मुस्लिम सिख ईसाई, आपस में रहता है प्यार।
होली दीवाली ईद सभी में, एक दूजे से हम गले मिलें,
ऐसा प्यारा देश भारत, हम करते जिसकी जयकार।।

सुख दुःख मिलजुल हम करते एक दूजे का सहयोग,
हम नाम न लें कभी बड़ो का, काका दादा का प्रयोग।
दूजे की खुशियों के लिए, तन मन धन से रहते तैयार,
हम प्रण लेते हैं, न कभी करेंगे विषता का उपयोग।।

मेरी अभिव्यक्ति

कविताएं / लघु कथाएं लिखो

पुरस्कार जीतो

सीमित संख्या

प्रथम पुरस्कार

₹11000/-

द्वितीय पुरस्कार

₹5100/-

तृतीय पुरस्कार

₹2500/-

प्रविष्टि भेजने की अंतिम तिथि

30 सितंबर 2022

info@gssfoundation.org

74154 10516

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

GORAKSH SHAKTIDHAM SEVARTH FOUNDATION

अध्यात्म | शिक्षा | संस्कृति

www.gssfoundation.org

पंजीकरण फॉर्म साइट पर उपलब्ध है।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

अहिंसक जीवन शैली की व्यवहारिकता

और मानव समाज की समरसता का आधार स्तम्भ

डॉ. बी. के. मेधावी शुक्ला
(पूर्व अनुसंधान अध्येता)
गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

प्रस्तुत्त आलेख में मानव जीवन की उस महान परम्परा को उल्लेखित किया गया है जिसमें वह धर्म के सर्वाधिक अनुकरणीय सिद्धांत से अनुप्राणित होते हुए गतिशील रहता है । मनुष्यता की रक्षा और सामाजिक समरसता के आधार स्तम्भ के रूप में प्राचीनतम से आधुनिकतम तक मानव के समीप, मानस को अभिप्रेरित करने हेतु *"अहिंसा परमो धर्मः"* की विराट स्वीकारोक्ति ही है। आज एक मनुष्य को अहिंसक जीवनशैली आत्मसात करते हुए वर्तमान जीवन की विभिन्न चुनौतियों के समाधान के मुख्य कारक समदृश्य सामाजिक समरसता हेतु अपनाना आवश्यक है। अहिंसक जीवनशैली के प्रति गहरी आस्था विकसित हो जाने पर निजी जीवन की निष्ठा स्वयं के प्रति पवित्र – भाव, भासना, भावना एवं भाषा के विविध अभिव्यक्त स्वरुप से होती है जिसमें स्व कल्याण से सर्व कल्याण का मनोभाव पूर्ण मनोयोग से संप्रेषित होता है। यह आलेख अहिंसक जीवनशैली को सामाजिक समरसता के लिए एक प्रस्थान बिंदु के रूप में प्रतिपादित करता है

जिसके परिदृश्य में एक मनुष्य का पूर्णतया अहिंसक हो जाना जीवन की अनिवार्यता होती है तभी वह सामाजिक समरसता के लिए आधारभूत भूमिका का निर्वहन करने में सक्षम सिद्ध हो सकता है। अहिंसक जीवनशैली को सामाजिक समरसता के आधार स्वरुप जिन मानदंडों को सम्मिलित किया गया है उनमें मानव समाज की समरसता का स्वरुप, अंतिम सत्य की मान्यता का दबाव, सृजन की व्यापक उत्पत्ति का मूल्यांकन, मानव कल्याण का व्यवहार पक्ष, प्रमुख है जो अहिंसक जीवनशैली की पुनर्स्थापना में विशिष्ट योगदान देते है जिससे सामाजिक समरसता का पवित्र – भाव मानव जीवन के व्यवहार पक्ष में क्रियान्वित होना सहज हो सके ।

नव समाज की समरसता का स्वरुप : जीवन की व्यापकता में अधिकार एवं कर्तव्य का स्वरुप सदा से ही वसुधैव कुटुम्बकम की विराट अवधारणा से सम्बद्ध रहा है जिसमें अहिंसक जीवन शैली को सामाजिक समरसता का आधार मानकर निजी जीवन के व्यवहार पक्ष में स्वीकार किया जाता है। मानव समाज की संरचना और उसकी गतिशीलता में व्यक्ति, व्यवस्था, कार्यपालन एवं न्यायपालन का विशिष्ट योगदान रहा है जिसमें व्यक्तियों के सामूहिक विकास हेतु लघु एवं वृहद् मानदंड अर्थात् नियमों एवं उपनियमों का उल्लेख देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार विवेचित किया गया है। किसी मनुष्य के भीतर आंतरिक अनुशासन के उपबंधों की बात करें तो सृष्टि के विभिन्न धर्मों में से किसी भी धर्म अथवा सम्प्रदाय, पंथ एवं मार्ग का अनुसरण करते हुए जीवन जीने की स्वतंत्रता का अधिकार संविधान में प्रदान कर दिया जाता है लेकिन इस व्यक्तिगत स्वतंत्रता में किसी अन्य मनुष्य को कष्ट, दुःख या

पीड़ा की स्थितियां निर्मित नहीं होनी चाहिए इस तथ्यगत सत्य का उल्लेख भी वर्णित रहता है।

मानव स्वभाव की मनोगत पृष्ठभूमि से जुड़े मनोवैज्ञानिक, समाज शास्त्रीय एवं दार्शनिक व्याख्या के सन्दर्भ एवं प्रसंगों के तर्कसंगत स्वरुप के अतिरिक्त कुतर्कों तथा बाध्यकारी विवेचनाओं और उसके अनुपालन के दबाव से मुक्ति हेतु विभिन्न राष्ट्रों के संवैधानिक नियमों में व्यक्तियों को अनुशासित बनाये रखने में वहां की व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका द्वारा अधिकार एवं कर्तव्यों का पक्ष निर्धारित किया जाता है। अहिंसक जीवन शैली मानवीय आचरण का वह सबल पक्ष है जिसमें वह एक मानव की उपस्थिति के अस्तित्व को स्वीकार करता है जो विचार एवं भावनाओं का सृजन करते हुए स्वयं के होने के दावे को अपनी सात्विक गतिविधियों के माध्यम से स्थापित करने का प्रयास करता है। एक व्यक्तित्व का अस्तित्व सामाजिक पृष्ठभूमि में यथार्थ के धरातल पर' सह अस्तित्व ' की भूमिका में ' सर्व धर्म समभाव ' के स्वरुप में होता है तो वह सदा स्वागतेय होता है। जीवन की पावनता जब मनुष्यता के मध्य 'सर्व भवन्तु सुखिनः' के व्यावहारिक संस्करण प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त कर लेती है तब " सामाजिक समरसता " का जीवंत हो जाना पूर्णतः नैसर्गिक हो जाता है।

अंतिम सत्य की मान्यता का दबाव : एक मनुष्य अहिंसक जीवनशैली की गरिमा को सुरक्षित एवं संरक्षित बनाये रखने के लिए भय, प्रेम एवं सामाजिक दबाव के साथ जीवन के दार्शनिक पहलुओं का भी अध्ययन करता है जिससे वह सामाजिक कल्याण एवं विकास के कार्यों में स्वयं की सहभागिता को सुनिश्चित कर सके। समाज में जब अहिंसक जीवनशैली के प्रतिपादन की स्थिति निर्मित होती है तब स्वयं को उच्चता के समीप आंकने का प्रचलन अंततः समाज तक यह सत्य उद्घाटित करा देता है कि स्वयं को सर्व अर्थात् सब – कुछ मानकर *"अहम् ब्रह्मास्मि"*... का उद्घोष कर देना सामाजिक समरसता को चुनौती देने का पर्याय बन जाता है। मनुष्य द्वारा स्वयं की अभिव्यक्ति चाहे वह मनन – चिंतन एवं अंततः वर्णन के स्वरुप में प्रतिपादित होती है तब व्यक्ति द्वारा स्वयं के सृजन को अंतिम सत्य मानकर उसे बलपूर्वक प्रचारित – प्रसारित करने से समाज में सामाजिक समरसता का अभाव उत्पन्न हो जाता है। अहिंसक जीवनशैली एक मनुष्य को इस बात की अनुमति कभी प्रदान नहीं करती जिससे व्यक्ति स्वयं को श्रेष्ठ साबित करने के लिए सर्व को भला – बुरा कहते हुए दूसरों की निरंतर आलोचना करता रहे। यदि व्यक्ति के सकारात्मक प्रयास के द्वारा विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय एवं पंथ में प्रविष्ट होकर गहन अध्ययन से कुछ सत्य एवं महत्वपूर्ण जीवन जीने के पहलू प्राप्त करने के वास्तविक ज्ञान से सदैव स्वयं के स्वमान अर्थात् कर्तव्यनिष्ठ स्वरुप में अभिव्यक्ति प्रदान करने का जीवन पर्यंत प्रयास किया जाना सामाजिक समरसता को पुनर्स्थापित करने का महत्वपूर्ण कारण बन जाता है ।

मानव कल्याण का व्यवहार पक्ष : राजयोग की प्राचीन परम्परा एक मनुष्यात्मा को स्वयं का साक्षात्कार कराने में सक्षम होती है और अहिंसक जीवनशैली के प्रति आस्था बनाए रखते हुए जीवन के उजले स्वरुप से आत्मिक ऊंचाई की प्राप्ति को प्रायोगिक रूप से सुनिश्चित करने में मददगार होती है। मानव समाज में सम. रसता का माधुर्य अहिंसक जीवन – शैली के द्वारा सृजित होता है तथा अहिंसक जीवनशैली की श्रंखला को पुरुषार्थ की परिणिति में क्रमशः पुण्यात्मा, धर्मात्मा, महात्मा एवं देवत्मा की अवस्था के सन्द. र्भ में स्वीकार किया जा सकता है जो आत्मिक उत्थान के परिष्कार द्वारा संभव होता है। अहिंसक जीवनशैली के अंतर्गत आत्मानुभूति का पक्ष इतना सबल होता है कि एक मनुष्य स्वयं की श्रेष्ठता के संबल से अपने जीवन को आलोकित करते हुए परमात्मानुभूति की पराकाष्ठा तक पहुँच जाता है। सामाजिक समरसता के आधार स्तम्भ के रूप में समाज द्वारा जब अहिंसक जीवनशैली को स्वीकार कर लिया जाता है तब इस विशिष्ट शैली के आधार पक्ष को सदृढ़ करने के लिए राजयोग के अवदान को महत्व प्रदान किया जाता है। राजयोगी जीवन के लिए जिन अनिवार्यताओं की प्रासंगिकता होती है उनमें मुख्य रूप से शुद्ध अन्न, सतसंग, ब्रह्मचर्य एवं दैवीय गुणों की धारणा का प्रबल पक्ष नीहित होता है। आत्मिक उत्कृष्टता अतंतः राजयोगी जीवन की आधारशिला होती है जिसमें अहिंसक जीवनशैली पुष्पित और पल्लवित होती है जो जीवन के सद्व्यवहार से प्रस्फुटित होते हुए सामाजिक समरसता का आधार बन जाती है ।

जीवन मूल्य से मनुष्यता का निर्माण : अहिंसक जीवनशैली के व्यापक प्रसंगों से होकर गुजरती है जिसके अंतर्गत मानव समाज की समरसता एक महत्वपूर्ण प्रस्थान बिंदु है जो जीवन मूल्य को सुरक्षित रखते हुए जीवन पर्यंत मानवीय मूल्यों के संरक्षण को अपनी आराधना का केंद्र बिंदु मानकर गतिशील होने की चेष्टा करते है जिसमें मानव कल्याण का व्यवहार पक्ष सहज रूप से सम्मिलित रहता है। अहिंसक जीवनशैली मनुष्य को उसकी मनुष्यता बनाये रखने के लिए सदैव सत्यमवद् के प्रतिज्ञा स्वरुप हो ईमानदारी से क्रियान्वित करने की सीख प्रदान करती है जिसमें धर्मम – चर का धारणात्मक पक्ष अनुशासन के प्रति गहन निष्ठा को रेखांकित करता है। अहिंसक जीवनशैली के प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में जहाँ मात्र देव भव रू का पूज्य स्वरुप धरती के सहनशील व्यवहार पक्ष को प्रकट करता है वहीं *पितृ देवों भवः* का समर्पण स्वरुप आकाश की छत्रछाया को सदैव बनाये रखने में सहयोग प्रदान करता है जिसकी परिणिति समाज के सम्मुख *आचार्य देव भवः* के श्रद्धांजलि स्वरुप में श्रेष्ठ संस्कारों का बीजारोपण आज्ञाकारीता के मूल्यों को सृजित कर नए मनुष्य के निर्माण द्वारा संपन्न किया जाता है। अतः शेष विराट सामाजिक संरचना को अहिंसक जीवनशैली के प्रति अंतर्जगत से व्यावहारिक निष्ठा समर्पित करना सामाजिक समरसता को बनाए रखने के लिए अनिवार्य शर्त के रूप में स्वीकार करना होगा तभी मानव समाज द्वारा जीवन मूल्यों का अनुगमन स्व–कल्याण की आरंभिक अवस्था से मानव कल्याण की सम्पूर्णता को सुनिश्चित किया जा सके ।

ज्ञान हारा प्रेम जीता

समीर उपाध्याय 'ललित'
जिला सुरेन्द्रनगर, गुजरात

कृष्ण के विरह में व्याकुल राधा मायूस होकर बैठी थी। इतने में उद्धव जी आए और बोले– 'राधा, मैं तुम्हें ज्ञान योग और तप सिखाने आया हूँ ताकि तुम्हारा कल्याण हो।'

राधा– कृष्ण ज्ञान योग से नहीं, प्रेम योग से मेरा होगा। हम दोनों में कोई अंतर न रह जाएं और दोनों एक हो जाएं यही है मेरा प्रेम योग। मुझे कोई दूसरा योग सीखने की आवश्यकता ही नहीं है।'

उद्धव जी– 'तुम्हारे प्रेम योग में तो सिर्फ विरह की वेदना है। मैं तुम्हें इस वेदना से मुक्ति दिलाने आया हूँ।'

राधा– 'परंतु मैंने कब मुक्ति माँगी? मुझे प्रेम योग को छोड़कर कोई दूसरा योग सीखना ही नहीं है।'

उद्धव जी– 'तुम तो विरह की वेदना से ग्रस्त हो। वेदना में आनंद कैसा?'

राधा– 'जिसे इस विरह वेदना में आनंद आता हो वहीं इसके बारे में बता सकता है। आप क्या जाने?'

उद्धव जी–'बात कुछ समझ में नहीं आई।'

राधा– 'बच्चे को जन्म देना माँ के लिए कष्टदायक होता है। फिर भी बच्चे को जन्म देकर 'माँ' की उपलब्धि मिलने पर जो आनंद की अनुभूति होती है उसका शब्दों में वर्णन ही नहीं किया जा सकता। इसलिए दुनिया की प्रत्येक स्त्री माँ बनने के लिए लालायित रहती है। यही हाल प्रेम में होता है। एक बार प्रेम रस का पान कर लिया, फिर दूसरे किसी आनंद की आवश्यकता ही नहीं रहती।'

उद्धव जी– 'लेकिन तुम तो विरह की वेदना में जल रही हो।'

राधा– 'आप विरह की पीड़ा की बात कर रहे हैं। विरह तो शरीरों का हो सकता है। प्रेमी तो हर पल एक दूसरे के साथ ही रहते हैं।'

उद्धव जी– 'यह सिर्फ कोरी कल्पना है।'

राधा– 'तो आप देखिए कृष्ण मेरे साथ है कि नहीं!'

तभी उद्धव जी को राधा के पास कृष्ण बैठे हुए दिखाई देते हैं। कृष्ण राधा को देखकर मंद–मंद मुस्कुराने लगते हैं एवं अधर पर मुरली धारण कर मधुर स्वर में बांसुरी बजाने लगते हैं और राधा भी कृष्ण के कंधे पर अपना सिर रख कर बड़ा आनंद पाती हैं।

उद्धव जी को बड़ा आश्चर्य होता है कि यह मेरा भ्रम है या वास्. तविकता? वे कृष्ण के हाथ को छू कर देखते हैं और हाथ जोड़कर कहते हैं कि प्रभु यह कैसी लीला है?

उद्धव जी से कृष्ण कहते हैं– 'मैंने आपसे कहा था कि मैं प्रेम के बस में हूँ। कोई प्रेमी मुझे बुलाएगा वहाँ मैं दौड़ा चला जाऊँगा। मैं सर्वत्र हूँ, किंतु दिखता नहीं। मुझे देखना हो तो प्रेम का दीपक जलाओ।'

उद्धव को राधा के प्रेम का सच्चा प्रमाण मिल जाता है। उनके मन के सारे संशय मिट जाते हैं और राधा–कृष्ण को संग देखकर उनके चरणों में अपना शीश झुका देते हैं।

श्रीराम का समय एक प्रमुख कालखंड

सुजाता प्रसाद

लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

भगवान राम की नगरी अयोध्या सरयू नदी के किनारे स्थित है। यह सप्तपुरी यानी (अयोध्या, वाराणसी, मथुरा, हरिद्वार, कांचीपुरम, द्वारका, उज्जैन) इन सात पवित्र शहरों में प्राचीन भारत का पहला महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। इस प्रकार सरयू नदी के तट पर बसा अयोध्या एक अति प्राचीन धार्मिक नगर है। उत्तर प्रदेश राज्य के केंद्र में स्थित अयोध्या शहर मंदिरों से घिरा हुआ शहर है। मान्यता है कि इस नगर को मनु ने बसाया था और इसका नाम अयोध्या दिया था जिसका अर्थ होता है अ–युध्य यानी जिसे युद्ध के द्वारा प्राप्त न किया जा सके। दूसरे शब्दों में कहें तो अयोध्या का शाब्दिक अर्थ होता है, जिसके साथ युद्ध करना असंभव हो। रघुवंशी राजाओं रघु, दिलीप, अज, दशरथ और राम की शक्ति और उनके पराक्रम के कारण उनकी राजधानी को अपराजेय माना जाता रहा है।

इस पवित्र नगरी को कोसल जनपद भी कहा जाता था। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार अयोध्या में सूर्यवंशी राजाओं का राज हुआ करता था, जिन्हें अर्कवंशी या रघुवंशी भी कहा जाता है। इसी अयोध्या में भगवान श्री राम ने अवतार लिया। राम जन्म स्थान के साथ साथ अन्य धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थान जैसे राम की पौड़ी, जैन मंदिर, बिड़ला मंदिर, गुलाब बाड़ी, सीता माता को समर्पित कनक भवन, सैन्य मंदिर, नया घाट, गुप्तार एवं अन्य घाट इत्यादि यहां के दर्शनीय स्थल हैं। दीपावली के दिन यहां के घाटों पर असंख्य मिट्टी के दीपक जलाए जाते हैं, जिसकी आभा से पूरा अयोध्या शहर जगमगा उठता है। सरयू नदी पर तैरते हुए सैकड़ों–लाखों दीए जल तल को अपनी रोशनी से सराबोर कर देते हैं और यह नजारा मन को मोह लेने वाला होता है।

किसी देश की आत्मा उसकी अपनी सभ्यता और संस्कृति में बसती है और श्री राम की इस देश की संस्कृति में बहुत गहरी पैठ है, रोम रोम में रचे–बसे हैं राम। महर्षि वाल्मीकि रामायण में श्रीराम जन्मभूमि की मोहक शोभा एवं महत्ता की तुलना दूसरे इन्द्रलोक से की गई है। धन–धान्य से परिपूर्ण, बेशकीमती रत्नों से समृद्ध अयोध्या नगरी की अतुलनीय छटा का वर्णन भी वाल्मीकि रामायण में मिलता है। तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस में भगवान श्रीराम की कहानी स्थानीय बोली अवधी में लिखी गई है, जिसमें अयोध्या का वर्णन भगवान राम के जन्मस्थान के रूप में प्रतिष्ठित है और भगवान राम रामायण के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में उपस्थित हैं।

वर्तमान की बात की जाए तो लगभग 500 वर्षों बाद श्रीराम जन्मभूमि शिलान्यास भूमि पूजन एक ऐतिहासिक दिन के रूप में दर्ज हो गया। विगत 5 अगस्त, 2020 को अयोध्या में राम मंदिर निर्माण की आधारशिला रखने का कार्यक्रम हुआ है। पूरा भारत अपनी खोई हुई गरिमा पाकर आनंद विभोर हो गया। अपनी सांस्कृ. तिक धरोहर को पुनर्जीवित होते देख हर भारतवासी के अंतर में खुशी के दीप जगमगा उठे। कोरोना काल में 5 सदी के लंबे अरसे बाद इसकी प्रतीक्षा खत्म हुई और पूरे विधि-विधान के साथ देश के प्रधानमंत्री के कर-कमलों द्वारा अयोध्या में राम मंदिर निर्माण का भूमि पूजन समारोह संपन्न हो गया। इस अवसर पर उन्होंने कहा ष्मंदिर निर्माण की प्रक्रिया राष्ट्र को जोड़ने का उपक्रम है। साथ ही यह भी कि 'यह मंदिर वर्तमान को अतीत से और स्वयं को संस्कार से जोड़ने की पहल है।' देश की जनता से खुद को जोड़ते हुए माननीय श्री नरेन्द्र मोदी ने कहा कि 'राम मंदिर देश में एकता और बंधुत्व की भावना को बल दे।'

भारत में सूर्यवंशियों के राज्य से सांस्कृतिक विरासत के रूप में अयोध्या जिले की उत्पत्ति हुई। अध्ययन के आधार पर यह कहा गया है कि अयोध्या को भगवान श्री राम के पूर्वज विवस्वान (सूर्य) के पुत्र वैवस्वत मनु ने बसाया था। इस नगरी पर सूर्यवंशी राजाओं का राज महाभारत काल तक रहा। यहीं पर प्रभु श्रीराम का दशरथ पुत्र के रूप में जन्म हुआ। सूर्यवंशी क्षत्रियों के वंश में राजा रघु हुए जिनके नाम से सूर्यवंश रघुवंश के रूप में लोकप्रिय हुआ। राजा रघु की तीसरी पीढ़ी में भगवान श्रीराम का जन्म हुआ था। ऐतिहासिक रामायण का काल प्राचीन भारत का सबसे गौरवशाली काल था। इस युग में पवित्र शास्त्रों, वेदों और अन्य साहित्य की रचना हुई जिसमें भारतीय संस्कृति और सभ्यता की झलक मिलती है। राम राज्य का शासन अपने कानून और सत्यता के लिए आज भी अनुकरणीय है। श्रीराम के द्वारा स्थापित किए गए मानवीय और नैतिक मूल्य, धार्मिक और सांस्कारिक विचार, सामाजिक और राजनीतिक कार्य अतुलनीय थे और आज भी सर्वमान्य हैं। भगवान श्रीराम भारतीय इतिहास, संस्कृति और हमारी आस्था के प्रतीक हैं।

इतिहासकारों के अनुसार कौशल प्रदेश की प्राचीन राजधानी अवध को कालांतर में अयोध्या और बौद्ध काल में साकेत कहा जाने लगा। अयोध्या में एक महत्वपूर्ण व्यापार केंद्र था। इस स्थान को अंतरराष्ट्रीय पहचान 5वीं शताब्दी में ईसा पूर्व के दौरान तब मिली जबकि यह एक प्रमुख बौद्ध केंद्र के रूप में विकसित हुआ। तब इसका नाम साकेत था। किंवदंती है कि भगवान राम के जल समाधि लेने के बाद जब अयोध्या का विकास हो रहा था तब भी राम जन्मभूमि पर बना दशरथ महल वैसा ही था। भगवान राम के पुत्र कुश ने फिर अयोध्या का पुनर्निर्माण किया और इसके बाद सूर्यवंश की 44 पीढ़ियों ने यहां पर राज किया। सूर्यवंश के आखिरी राजा महाराजा बृहद्बल तक राम जन्मभूमि की देखभाल होती रही। कौशल राज बृहद्बल की मृत्यु महाभारत युद्ध में अभिमन्यु के हाथों हुई थी। महाभारत के युद्ध के बाद अयोध्या उजाड़-सी हो गई, मगर श्री राम जन्मभूमि का अस्तित्व फिर भी बना रहा।

इसके बाद ऐतिहासिक विवरण में यह उल्लेख मिलता है कि ईसा के लगभग 100 वर्ष पूर्व उज्जैन के चक्रवर्ती सम्राट विक्रमादित्य एक दिन आखेट करने के दौरान अयोध्या पहुंच गए। घने जंगल के प्रदेश अयोध्या में सरयू नदी के किनारे एक आम्र वृक्ष के नीचे वे अपनी सेना सहित आराम करने लगे। उस समय वहां कोई जन जीवन बसा नहीं था। पर महाराज विक्रमादित्य को यह भूमि कुछ अद्भुत लगी, जो उन्हें चमत्कृत कर गई। तब अपनी जिज्ञासा को शांत करने के लिए वे आस-पास के योगी व संतों के पास गए, उनकी कृपा से उन्हें ज्ञात हुआ कि यह श्रीराम की अवध भूमि है। उन संतों के निर्देश से सम्राट ने यहां एक भव्य मंदिर का निर्माण करवाया। विक्रमादित्य के बाद कई राजा मंदिर की देखभाल करते रहे और पूजा-पाठ विधि विधान के साथ होता रहा।

ऐतिहासिक दस्तावेज बताते हैं कि इसके बाद ईसा की 11वीं शताब्दी में कन्नौज नरेश जयचंद ने मंदिर पर जड़ित, सम्राट विक्रमा. दित्य के प्रशस्ति शिलालेख को उखाड़कर अपने नाम की प्रशस्ति लिखवा दिया। पानीपत के यद्ध में जयचंद की मृत्यु के बाद भारतवर्ष

लगातार आक्रांताओं के आक्रमण से ग्रसित रहा। आक्रमणकारियों ने काशी, मथुरा में लूटपाट मचाया। साथ ही अयोध्या में भी लूटपाट की और मूर्तियां तोड़ने का क्रम जारी रखा। लेकिन फिर भी 14वीं सदी के अंत तक उन्हें अयोध्या में राम मंदिर को तोड़ने में सफलता नहीं मिल पाई। इतनी उथल–पुथल के बाद भी श्री राम जन्मभूमि पर बना दिव्य मंदिर 14वीं शताब्दी तक अपनी भव्यता में बना रहा। परन्तु 14वीं शताब्दी में भारत मुगलों के आक्रमण का शिकार हो गया और मुगलों के अधीन हो गया। उसके बाद ही राम जन्मभूमि में अयोध्या को नष्ट करने के लिए कई अभियान चलाए गए। अंततः 1527–28 में इस भव्य मंदिर को तोड़ दिया गया। बाबरनामा के अनुसार 1528 में अयोध्या पड़ाव के दौरान बाबर ने मस्जिद निर्माण का आदेश दिया था।

समय बीतने के साथ मंदिर के पुनर्निर्माण के संघर्ष का जयघोष किया गया, और वहाँ एक नया मन्दिर बनाने के लिये एक लम्बा आन्दोलन चला। वहाँ श्री राम का एक अस्थायी मन्दिर निर्मित कर दिया गया और रामलला टेंट में रहने लगे। फिर सिल. सिला शुरू हुआ इंतजार का जो हमारी भावनाओं में कई लघु कथाओं के रूप में प्रतीक्षारत् था, यह कहते हुए कि उदासी मन काहे को डरे रे। पर 'देर है, अंधेर नहीं' के तर्ज पर अब इंतजार की घड़ियां खत्म हुई और हर्षोल्लास का समय आ गया। दीपावली के शुभ अवसर पर हम सब अयोध्या नगरी की मनोरम छटा के और सुखद पल के साक्षी बनते रहे हैं। अनवरत गति से चल रही निर्माण प्रक्रिया समय पर संपन्न हो जाए और पवित्र मंदिर परिसर में भक्त जन दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकें यही शुभकामना हर भारतवासी की है।

माना गया कि न्याय पूर्ण राज्य के लिए राम की जरूरत है। क्यूंकि वर्तमान में मानवता को ऐसे आइकॉन की जरूरत है। उन्होंने सदियों से पीढ़ियों तक हमें प्रेरित किया है। वे आज भी प्रासंगिक हैं और एक आदर्श के रूप में मानवता की मदद कर रहे हैं। सच मानें तो श्रीराम स्थिरता, संतुलन, शांति के आइकॉन हैं। वे एक कंप्लीट पैकेज हैं, सचेतन व्यक्तित्व के, एक आदर्श व्यक्तित्व। जब कदम उठाना होता है तो वे निर्णायक कदम उठाते हैं। समर क्षेत्र में जाना अनिवार्य हो तो युद्ध करना स्वीकार करते हैं। जब जीवन समर्पण की मांग करता है तो सहर्ष समर्पण करते हैं। इतना ही नहीं जब राज पाट छोड़ने की बात हो तो राज्य भी छोड़ देते हैं। और इतना सब कुछ अपनी चेतना में संतुलित होकर करते हैं, वो भी बिना किसी प्रतिक्रिया के। श्रीराम इस संस्कृति के प्रतिनिधि हैं, वो न्याय के प्रतिनिधि हैं। उनकी यही कोशिश रही कि लोगों को न्याय कैसे दें। और इस तरह से उनके द्वारा किए गए काम और मिली सकारात्मक उपलब्धि के कारण श्रीराम का समय एक प्रमुख कालखंड बन गया। आज हम जब रामराज्य की बात करते हैं तो हमारा मतलब होता है न्यायपूर्ण और उचित राज्य। राम राज्य आज भी प्रासंगिक है, लोकहितकारी है।

दोहा

राम

डॉ. सुनीता संह 'सुधा'
लेखिका, कवियत्री, गीतकार

महाराज श्री राम प्रभु, बने जानकी नाथ ।
भरत लखन रिपुदमन सँग, जगत नवाता माथ ।।

दंभी मन के दर्प को, किया शक्ति से चूर्ण ।
धनुष भंग कर राम ने, किया स्वयंवर पूर्ण ।।

राम ओज माधुर्य के, संगम शील निधान।।
जग मंगल आदर्श के, थे विराट प्रतिमान ।।

शील शक्ति सौन्दर्य के, रघुवर दिव्य स्वरूप ।
जग मर्यादा धर्म के, जन गण मन के भूप ।।

राम महानायक हुए, संस्कृति के आधार ।
पुरुषोत्तम प्रादर्श प्रभु, मर्यादा–अवतार।।

एकत्रित कर शक्ति को, किया बदी का नाश ।
वैमनस्य को दूर कर, अंतर्‌ किया प्रकाश ।।

छिपी हृदय के गर्भ में, मुक्ताहल की खान ।
समरसता जिसने जिया, बढ़ा उसी का मान ।।

राम दिव्य इतिहास निधि,वर्तमान हैं राम
भावी भी हैं राम जी, रघुवर पूरणकाम।।

रामचरित लिखकर हुए, तुलसी तुलसीदास ।
राम नाम का जाप कर, धन्य हुआ विश्वास।।

राम सत्य के धाम हैं, क्षमा दया सुख–शील ।
शरणागत मन को दिखें, वदन सरोरुह नील ।।

जीवन दर्शन के महान कवि कबीरदास जी

सौ. भावना दामले
स्वतंत्र लेखन
इन्दौर (मध्य प्रदेश)

भारतीय संत साहित्य ने हमेशा ही जनता का मार्गदर्शन किया है, समाज सुधार का कार्य किया है। महात्मा कबीर दास जी का नाम संत साहित्य में सर्वोपरि है। यह भक्ति काल की निर्गुण धारा के ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं। इनके नाम से एक पंथ भी चला जो कबीर पंथ कहलाया। इन पर नाथों, सिद्धों तथा सूफी संतों की बातों का प्रभाव है। ये कर्मकांड के विरोधी थे – जाति, वर्ण तथा संप्रदाय भेद के स्थान पर प्रेम, सद्भाव तथा समानता का समर्थन करते थे। इस बात की पुष्टि उनके द्वारा रचित दोहों तथा साखियों से होती है।

कबीर घुमक्कड़ थे, इसलिए इनकी भाषा में उत्तर भारत की बोलियों के अनेक शब्द पाए जाते हैं । इनके काव्य में अलंकार स्वाभाविक रूप से आ गए हैं। वह अपनी बात को स्पष्टता से तथा प्रभावी ढंग से कह देते थे। आचार्य हजारी प्रसाद जी के शब्दों में 'भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था, वह वाणी के डिक्टेटर थे।' कबीर दास जी का साहित्य आत्ममंथन कर सोचने को प्रेरित करता है। उनकी साखियों में जीवन दर्शन भरा हुआ है जो आज भी प्रासंगिक है। इनके पदों में तथा साखियों में शांत रस प्रभावी ढंग से व्यक्त हुआ है। शब्दों का प्रयोग किस प्रकार करना चाहिए इस संबंध में कबीर दास जी ने बहुत अच्छी बात कही है :

शब्द सम्हारे बोलिए शब्द के हाथ न पाँव । एक शब्द औषधि करें एक शब्द करें घाव ।।

कबीरदास जी कहते हैं कि व्यक्ति को सोच समझकर ही बोलना चाहिए क्योंकि शब्द के हाथ पैर नहीं होते हैं किंतु फिर भी उनका बड़ा ही महत्व है। एक प्रकार से मधुर वाणी में कहा गया शब्द औषधि के समान कार्य करता है तो कटु वाणी में कहा गया शब्द आघात पहुंचाता है।

जीवन में संगति का बड़ा ही महत्व है – हमेशा अच्छे लोगों की संगति करना चाहिए। इस संबंध में कबीरदास जी कहते हैं :

कबीर संगति साधु की, जो करि जाने कोय, सकल बिरछ चंदन भये, बांस न चंदन होय ।।

कबीरदास जी कहते हैं कि यदि कोई सत्संगति करना जानता है तो उसे संत पुरुषों का साथ करना चाहिए क्योंकि अच्छे साथ से प्रभावित होकर सभी वृक्ष सुगंध में चंदन के समान हो सकते हैं। किंतु सत्संगति के अभाव में बाँस चंदन नहीं हो सकता है।

कबीर दास जी के अनुसार हमेशा कुसंगति से बचना चाहिए और अच्छे लोगों की संगति करना चाहिए :

कबीर कुसंग न कीजिए पाथर जल न तिराय।
कदली सीप भुजंग मुख एक बूंद तिर भाय ।।

जिस प्रकार स्वाति नक्षत्र की बूंद सीप से मिलकर मोती बनती है और वही स्वाति नक्षत्र की बूंद केले पर गिरकर कपूर बन जाती है। और वही स्वाति नक्षत्र की बूंद कुसंग यानी सर्प के मुंह में गिरकर विष बन जाती है। इसलिए कबीरदास जी कहते हैं संगति का प्रभाव मनुष्य की उन्नति और अवनति का कारण बनता है इसलिए व्यक्ति को सावधानीपूर्वक संगति करना चाहिए ।

जिभ्या जिन बाद में करी, तिन बस कियो जहान ।
नहि तो औगुन उपजै, कहि सब संत सुजान ।।

कबीरदास जी कहते हैं कि जिस मनुष्य ने वाणी को अपने वश में कर लिया है उसने समस्त संसार को अपने वश में कर लिया है। जिसका अपने वाणी पर नियंत्रण नहीं है उसमें अनेक अवगुण आ जाते हैं और उसे सभी जगह बुराई मिलती है यह बात सभी संत पुरुष कहते हैं ।

कबीरदास जी ने देशाटन और सत्संग से ज्ञान प्राप्त किया। पुस्तकी ज्ञान के स्थान पर आँखों से देखे हुए सत्य और मिले हुए अनुभव को प्रमुखता दी है – *'मैं कहता हों आँखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी।'*

कबीर दास जी ईश्वर के स्वरूप के विषय में कहते हैं कि जिस प्रकार बढ़ाई या सुतार लकड़ी को काट सकता है परंतु उस लकड़ी में समाई हुई अग्नि को काट नहीं सकता उसी प्रकार मनुष्य के शरीर में ईश्वर व्याप्त है शरीर नष्ट होने पर आत्मा नष्ट नहीं होती, वह अमर है। वह आगे कहते हैं कि संसार में अनेक तरह के प्राणी है परंतु सभी के हृदय में ईश्वर समाया हुआ है और वह एक ही है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ईश्वर एक है वह सर्वव्यापक तथा अजर अमर है जो जिस रूप में प्रभु की भक्ति करता है उसे प्रभु उसी रूप में दिखाई देते हैं।

समकालीन दोहे

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

जीवन है विपरीत अब,सब कुछ है प्रतिकूल।
फूलों की बातें नहीं, चुभते हैं नित शूल।।

प्यार, वफा और सत्य अब, ना इंसां के पास।
भावों का खोया हुआ, देखो अब अहसास।।

बदल गया इंसान अब, बना हुआ है यंत्र।
इसीलिए तो जिन्दगी, मानो हो संयंत्र।।

रोज विहँसता झूठ अब, हार गई मुस्कान।
सच्चा अवसादों घिरा, मिथ्या का है मान।।

रिश्ते सारे टूटते, स्वारथ का बाजार।
बदला है इंसान का, आज सकल आचार।।

बदल गया इंसान अब, उसका कपटी रूप।
इसीलिए तीखी लगे, मक्कारी की धूप।।

संदेहों का ताण्डव, बिलख रहा विश्वास।
हर इक अब मायूस है, नहीं शेष अब आस।।

इंसां खो संवेदना, बना हुआ पाषाण।
चला रहा अविवेक के,वह अब नित ही बाण।।

सब उदारता हो गया, मानव अब अनुदार।
दयाभाव अब शोष ना, हिंसा का व्यवहार।।

कैसा कलियुग आ गया, बदल गया इंसान।
दौलत के पीछे लगा, तजकर सब सम्मान।।

इंसां ने अब खो दिया, अपनेपन का भाव।
भाईचारा है नहीं, भौतिकता का ताव।।

खूनी है अब आचरण, सत्य गया है रूठ।
मानव को अब भा रहा, केवल–केवल झूठ।।

बदल गया इंसान अब, भूल गया ईमान
पाकर दौलत बन गया,मानो खुद भगवान।।

नारी–नर अब छोड़कर, सारा चाल–चरित्र।
बने हुए हैं आजकल, मानो हों चलचित्र।।

नैतिकता को तज करे, पोषित वो अँधियार।
इंसां अब इंसान ना, बना हुआ अख़बार।।

नारी वस्त्र उतारकर, बनी हुई गतिशील।
कब का खोया नार ने, भीतर का सब शील।।